पालि-ग्रन्थमाला
[११]

चूल्लधम्मपालाचरियविरचितो

सच्चसङ्खेपो

सम्पादको टिप्पणीकारो च
आचरियो लक्ष्मीनारायणतिवारी



सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी

PĀLI-GRANTHAMĀLĀ
[Vol. 11]

SACCASAṄKHEPO

OF

CULLADHAMMAPĀLĀCARIYA

Critically Edited and Annotated with Notes
By

PROF. LAKSHMI NARAYAN TIWARI
Ex. Professor & Head
Department of Pali & Theravāda
Ex. Dean, Faculty of Śramaṇa Vidyā
Sampurṇānand Sanskrit University
Varanasi



VARANASI
2000

Research Publication Supervisor—
Director, Research Institute
Sampurnanand Sanskrit University
Varanasi.

ISBN : 81-7270-030-X



Published by—
Dr. Harish Chandra Mani Tripathi
Director, Publication Institute
Sampurnanand Sanskrit University
Varanasi-221 002.



Available at—
Sales Department,
Sampurnanand Sanskrit University
Varanasi-221 002.



First Edition, 500 Copies
Price : Rs. 16.00



Printed by—
Shreejee Computer Printers
Nati Imali, Varanasi-221 002

पालि - ग्रन्थमाला
[११]

चूल्लधम्मपालाचरियविरचितो

सच्चसङ्खेपो

सम्पादको टिप्पणीकारो च

आचरियो लक्ष्मीनारायणतिवारी

पुब्बपधानो
पालि-थेरवादविभागस्स
पुब्बसङ्कायपमुखो च
'श्रमणविद्या-संकाय'स्स
'सम्पूर्णानन्द-संस्कृत-विश्वविद्यालये'
बाराणसियं



वाराणसी

बुद्धवस्से २५४४ विक्कमवस्से २०५७ खरिसवस्से २०००

ISBN : 81-7270-030-X

अनुसन्धान-प्रकाशन-पर्यवेक्षक —
निदेशक, अनुसन्धान-संस्थान
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी।

❒

प्रकाशक —
डॉ. हरिश्चन्द्र मणि त्रिपाठी
निदेशक, प्रकाशन-संस्थान
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी-२२१००२

❒

प्राप्ति-स्थान —
विक्रय-विभाग,
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी-२२१००२

❒

प्रथम संस्करण – ५०० प्रतियाँ

मूल्य – १६.०० रूपये

❒

मुद्रक —
श्रीजी कम्प्यूटर प्रिण्टर्स
नाटी इमली, वाराणसी-२२१००२

भूमिका

अनन्तञाणं करुणालयं लयं
मलस्स बुद्धं सुसमाहितं हितं।
नमामि धम्मं भवसंवरं वरं
गुणाकरं चेव निरङ्गणं गणं।।
कस्सपं च महाथेरं जगदीसं ति विस्सुतं।
नमामि सन्तवुत्तिं तं गरुं गारवभाजनं।।

प्रस्तुत ग्रन्थ सच्चसङ्खेप अभिधर्म के सिद्धान्तों को संक्षिप्त रूप में प्रकट करनेवाला एक लघु ग्रन्थ है। अट्ठकथाओं के विद्यमान रहते हुए भी अभिधर्म के सिद्धान्त अध्येताओं के लिए कालान्तर में इतने दुरूह हो गये कि उन्हें हृदयङ्गम करने में कठिनाई होने लगी। अत: इसे दूर करने के लिए अवतार, सङ्खेप और संग्रह के रूप में स्वतन्त्र ग्रन्थों की आचार्यों द्वारा रचना हुई और इसी क्रम में अभिधम्मावतार, सच्चसङ्खेप तथा अभिधम्मत्थसङ्गह आदि ग्रन्थ लिखे गये। इससे अभिधर्म-रूपी महाकान्तार में प्रवेश अथवा अभिधर्म-रूपी महोदधि को पार करने में सुगमता दृष्टिगोचर हुई तथा अभिधर्मपिटक के मूल ग्रन्थों के स्थान पर बाद में आचार्यों द्वारा रचे गये ऐसे ही ग्रन्थों का पठन-पाठन प्रचलित हुआ।

अभिधर्मपिटक का बुद्धवचनत्व

स्थविरवादी अभिधम्मपिटक

बुद्धशासन की आधारशिला बुद्धवचन अथवा परियत्ति है। अत: सद्धर्म की चिरस्थिति इसी पर आधारित है। यह भी विशेष रूप से ध्यातव्य है कि भगवान् बुद्ध के महापरिनिर्वाण के तत्काल बाद ही बुद्धवचनों के संग्रह का संकल्प महास्थविर महाकाश्यप द्वारा लिया गया। जब शास्ता के परिनिर्वाण से दु:खी होकर अवीत-राग भिक्षु अत्यन्त शोकमग्न होकर विलाप आदि कर रहे थे तो सुभद्र नामक एक वृद्ध प्रव्रजित ने यह कहा—"आयुष्मानों, मत शोक

करो, मत विलाप करो। हम लोगों को उस महाश्रमण से मुक्ति मिली। हम उसके द्वारा यह कहकर सदा पीड़ित किये जाते थे कि यह तुम्हें विहित है, यह तुम्हें विहित नहीं है। अब हम जो चाहेंगे करेंगे, जो नहीं चाहेंगे, वह नहीं करेंगे"[१]। सुभद्र के इन वचनों को सुनकर महाकाश्यप चिन्तित हुए। उन्होंने कहा कि अधर्म और अविनय प्रकट हो रहा है और धर्म तथा विनय की रक्षा के लिए यह आवश्यक है कि इनका सङ्गायन कर लिया जाय। इससे बौद्ध-शासन की चिरस्थिति होगी। ज्ञप्ति के द्वारा इस कार्य हेतु राजगृह को चुना गया और वहीं पर वर्षावास करते हुए धर्म तथा विनय के सङ्गायन का निश्चय किया गया। इसके लिए एक कम पाँच सौ अर्हत् पद प्राप्त भिक्षुओं का चयन हुआ। यद्यपि आनन्द स्थविर शैक्ष्य थे, किन्तु सर्वदा ही बुद्ध का अनुगमन करने के कारण उनके उपदेशों से वे सुपरिचित थे; अतः इस कार्य के लिए इन्हें भी चुन लिया गया। यह भी ज्ञप्ति द्वारा निश्चित हुआ कि इन पाँच सौ भिक्षुओं के अतिरिक्त राजगृह में कोई अन्य भिक्षु वर्षावास नहीं करेगा, जिससे सङ्गायन का कार्य निर्विघ्न रूप में सम्पन्न किया जा सके[२]।

यह प्रथम सङ्गीति महाकाश्यप की अध्यक्षता में प्रारम्भ हुई। बुद्धशासन की आयु विनय है, अतः सर्वप्रथम विनय-सम्बन्धी उपदेशों के बारे में उपालि से पूछा गया और उपालि ने विस्तार से उन्हें सूचित किया; तथा धर्म (धम्म) अर्थात् सुत्तों के सन्दर्भ में आनन्द से पृच्छा की गयी और उन्होंने भी विस्तार से सुत्तों को प्रस्तुत किया। उपस्थित सम्पूर्ण भिक्षु-समूह ने इन दोनों से सुनकर विनय तथा सुत्त का सङ्गायन किया और विनयपिटक तथा सुत्तपिटक स्थिति में आये। सुत्तपिटक का निकायों के रूप में भी इसी समय सङ्गायन हुआ[३]। परम्परा के अनुसार इसमें अभिधम्मपिटक के सात ग्रन्थों का भी सङ्गायन हुआ[३]; किन्तु अट्ठकथाओं में यह विवरण प्राप्त नहीं है कि अभिधम्म-सम्बन्धी पृच्छा किससे की गयी। साधारण रूप से अभिधर्म को भी धम्म के अन्तर्गत मानकर खुद्दकनिकाय में ही परम्परया अभिधर्मपिटक का भी समावेश कर लिया जाता है और निकाय के रूप में बुद्धवचनों के स्वरूप में विनयपिटक को भी स्थविरवादी परम्परा खुद्धकनिकाय में संगृहीत मानती है[४]। किन्तु परम्परा में यह

---

१. दी०नि०२, पृ०१२५, नालन्दा संस्करण, १९५८; चुल्लवग्ग, पृ० ४०६, नालन्दा संस्करण, १९५६।

२. सुमङ्गलविसालिनी, १, पृ० ५-६, रोमन संस्करण, १८८६।

३. वहीं, पृ० १५।

४. वहीं, पृ० २३; समन्तपासादिका १, पृ० १६, नालन्दा संस्करण, १९६४।

स्पष्ट रूप से उल्लिखित है कि विनयपिटक को उपालि ने सविस्तार प्रस्तुत किया था, किन्तु अभिधम्म को किसने वहाँ रखा, यह विवरण नहीं मिलता; केवल धम्म के उपस्थापन के प्रश्न के प्रसङ्ग में अङ्गुत्तरनिकाय के पश्चात् अभिधम्म के सङ्गायन की बात वहाँ कही गयी है और इसे सूक्ष्मज्ञानगोचर तन्ति के नाम से अभिहित किया गया है तथा यह किसके द्वारा वहाँ प्रस्तुत किया गया, इसका स्पष्ट उल्लेख नहीं है। यदि खुद्दकनिकाय के अन्तर्गत धम्म के रूप में अभिधम्म का संग्रह प्रथम सङ्गीति में मान भी लिया जाय तो विनयपिटक को उपालि द्वारा प्रस्तुत होने पर भी खुद्दकनिकाय के अन्तर्गत इसे रखने का क्या औचित्य होगा। परम्परा में तो इसका यह उत्तर दे दिया जाता है कि चारों अन्य निकायों में जो बुद्धवचन संगृहीत हैं उनके अतिरिक्त अवशिष्ट बुद्धवचन खुद्दनिकाय में संगृहीत हैं तथा वहाँ पर जो विनयपिटक को निकाय के रूप में रखा जाता है, उसे उपालि ने प्रस्तुत किया था और शेष खुद्दकनिकाय और अन्य चारों निकायों को आनन्द ने। समन्तपासादिका में यह उल्लिखित है— "तत्थ खुद्दकनिकायो नाम चत्तारो निकाये ठपेत्वा अवसेसं बुद्धवचनं। तत्थ विनयो आयस्मता उपालित्थेरेन विस्सज्जितो, सेसखुद्दकनिकायो चत्तारो च निकाया आनन्दत्थेरेन"[१]। इससे प्रथम सङ्गीति में अभिधम्म को प्रस्तुत करनेवाले आनन्द ही हो जाते हैं; किन्तु धम्मसङ्गणि की अट्ठकथा अट्ठसालिनी में अभिधम्म की देशना की परम्परा का दूसरे प्रकार से उल्लेख आचार्य बुद्धघोष द्वारा किया गया है[२], और यह उल्लेख प्रथम सङ्गीति में उन्हीं के द्वारा दीघनिकाय की अट्ठकथा सुमङ्गलविलासिनी और विनयट्ठकथा समन्तपासादिका में प्रदत्त विवरणों से भिन्न होने के कारण प्रथम सङ्गीति में ही अभिधम्म के सङ्गायन के प्रति सन्देह उत्पन्न करता है।

द्वितीय सङ्गीति भगवान् बुद्ध के परिनिर्वाण के १०० वर्ष के बाद वैशाली में हुई। यद्यपि इसका आयोजन संघ में वज्जिपुत्तक भिक्षुओं द्वारा दस वस्तुओं के विनय-विरुद्ध आचरण को समाप्त करने के लिए हुआ[३], तथापि समन्तपासादिका में प्राप्त इसके विवरणानुसार दस वस्तुओं के निराकरण के पश्चात् इसमें भी प्रथम सङ्गीति के समान सम्पूर्ण धम्म तथा विनय का सङ्गायन भिक्षुओं द्वारा किया गया[४]। वैशाली के वज्जिपुत्तक भिक्षुओं ने इस द्वितीय सङ्गीति में हुए निर्णयों को अमान्य करते हुए दस सहस्र भिक्षुओं की महासङ्गीति अथवा

---

१. वहीं।
२. अट्ठ०, पृ० १४-१५।
३. चुल्लवग्ग, पृ० ४१६।
४. समन्तपासादिका १, पृ० ३०।

महासंघ का आयोजन कौशाम्बी में किया तथा दीपवंस ग्रन्थ में प्राप्त विवरणानुसार इस महासङ्गीति के भिक्षुओं ने बुद्ध-शासन को विपरीत करते हुए मूलसंघ में भेद उत्पन्न कर एक नये संघ की ही स्थापना कर डाली एवं मूलसंघ को भिन्दित कर सूत्रों का एक नवीन संग्रह प्रस्तुत कर दिया। उस समय स्थित विनय और पाँच निकायों के सूत्रों के क्रम को उन्होंने बदल दिया तथा उनमें अपने द्वारा रचित सन्दर्भों को जोड़ दिया[१]।

इस प्रकार उस समय स्थविरवादी और महासांघिक—ये दो निकाय स्थिति में आये तथा आगे चलकर बौद्ध-संघ १८ निकायों में विभाजित हो गया। कथावत्थु की अट्ठकथा में इन १८ निकायों के अतिरिक्त ९ और निकायों के नाम भी उपलब्ध होते है[२]। वसुमित्र, भव्य एवं विनीतदेव आदि के द्वारा प्रस्तुत एक अन्य परम्परा के अनुसार यह संघभेद विनय-विरुद्ध दस वस्तुओं के आधार पर न होकर महादेव द्वारा प्रस्तुत पाँच वस्तुओं के कारण हुआ था[३]।

तृतीय सङ्गीति सम्राट् अशोक के संरक्षत्व में पाटलिपुत्र में हुई। उस समय अशोक द्वारा बौद्ध धर्म को आश्रय प्रदान करने के कारण अन्य तैर्थिक भी संघ में लाभ हेतु प्रविष्ट हो गये थे और वे नाना प्रकार के अपने मतवादों और भिन्न प्रकार के आचरणों से संघ को दूषित कर रहे थे। इसका परिणाम यह हुआ कि सात वर्षों तक पाटलिपुत्र के अशोकाराम में उपोसथ भी नहीं हो पाया। मोग्गलिपुत्त तिस्स स्थविर से परामर्श कर संघ में छिपकर प्रविष्ट साठ सहस्र तैर्थिकों को अशोक ने संघ से निष्कासित कर दिया और तृतीय संगीति का पाटलिपुत्र में ही आयोजन किया गया[४]। अट्ठसालिनी नामक अट्ठकथा में कथावत्थु नामक अभिधम्मपिटक के ग्रन्थ के बुद्धवचन होने के बारे में यह पूर्वपक्ष दिया गया है कि बुद्ध के परिनिर्वाण के २१८ वर्ष पश्चात् जब इसकी रचना मोग्गलिपुत्त तिस्स द्वारा हुई थी तो इसे क्यों बुद्धवचन माना जाता है[५]।

---

१. दीपवंस पृ० ३६, रोमन संस्करण, १८७९ :
"महासङ्गीतिका भिक्खू विलोमं अकंसु सासनं।
भिन्दित्वा मूलसङ्घं अञ्ञं अकंसु सङ्घं।।
अञ्ञथा सङ्गहितं सुत्तं अञ्ञथा अकरिंसु ते।
अत्थं धम्मं च भिन्दिंसु ये निकायेसु पञ्चसु"।

२. कथा०अ०, पृ० २-५, रोमन संस्करण, १८८९।

३. पाण्डे, गोविन्दचन्द्र, बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास, पृ० १७७-१८०, १९७६।

४. समन्तपासादिका १, पृ० ४६-५३।

५. अट्ठ०, पृ० ४।

इससे यह ज्ञात होता है कि अट्ठसालिनी के रचयिता बुद्धघोष के समय तक अभिधम्मपिटक को बुद्धवचन मानने के विषय में लोगों को सन्देह था और आज जिस रूप में कथावत्थु उपलब्ध है, वह तो बुद्धभाषित न होकर आचार्यभाषित ही है। इसका उत्तर बुद्धघोष ने उक्त ग्रन्थ में यह दिया हैं कि अभिधर्म की देशना करते हुए बुद्ध ने केवल इसकी मातृकाओं की देशना की थी और कहा था कि मेरे परिनिर्वाण के २१८ वर्ष बाद मोग्गलिपुत्त तिस्स परवाद का खण्डन करते हुए और स्थविरवाद का मण्डन प्रस्तुत करते हुए इन मातृकाओं का व्याख्यान करेंगे। इस प्रकार उनका यह व्याख्यान अपना न होकर शास्ता द्वारा प्रदर्शित नयानुसार ही है[१]। अत: शास्ता द्वारा स्थापित मातृकाओं के आधार पर होने के कारण आचार्य मोग्गलिपुत्त तिस्स द्वारा भाषित होने पर भी कथावत्थु प्रकरण बुद्धभाषित ही है। वैज्ञानिक रीति से विचार करने पर यह तथ्य प्रदर्शित होता है कि तृतीय संगीति के अध्यक्ष मोग्गलिपुत्त तिस्स ने इस सङ्गीति के अवसर पर स्थविरवाद से भिन्न शेष १७ बौद्धनिकायों के मतों का खण्डन करते हुए कथावत्थु की रचना की थी[२] और यह प्रकरण वहाँ पर बुद्धवचन के रूप में सङ्गायित कर दिया गया। इससे यही स्पष्ट होता है कि स्थविरवाद का अभिधम्मपिटक आज जिस रूप में हमें प्राप्त,है, उसके स्वरूप का निर्धारण एक प्रकार से तृतीय सङ्गीति के अवसर पर ही हुआ था और बुद्ध के परिनिर्वाण के तत्काल बाद प्रथम सङ्गीति और उसके १०० वर्ष पश्चात् द्वितीय सङ्गीति में उसका सङ्गायन होना मात्र अर्थवाद है।

अभिधर्मपिटक के बुद्धवचनत्व को सिद्ध करने में आचार्य बुद्धघोष ने धम्मसङ्गणि-प्रकरण की अट्ठकथा अट्ठसालिनी में जमीन और आसमान को एक कर दिया है। लगता है कि उस समय इसे बुद्धवचन मानने में विवाद छिड़ा हुआ था। सूत्र और विनय को बुद्धवचन मानने में इतने विवाद का अवकाश नहीं था, क्योंकि प्रारम्भ से ही यह विवरण प्राप्त होता है कि इसके प्रस्तुतकर्ता आनन्द तथा उपालि थे।

अत: अभिधर्म के उद्भव के सम्बन्ध में यह उद्भावना बुद्धघोष के द्वारा की गयी कि भगवान् बुद्ध ने बुद्धत्व-प्राप्ति के बाद अपने सप्तम वर्षावास में त्रायस्त्रिंश देवलोक में जाकर लगातार तीन मास तक वहाँ विराजमान अपनी माता को विस्तारपूर्वक अभिधर्म का उपदेश दिया। पृथ्वीलोक में उन्होंने एक निर्मित बुद्ध की व्यवस्था कर दी थी, जिसके द्वारा सर्वप्रथम अनवतप्त ह्रद के पास सारिपुत्त को

---

१. वहीं, पृ० ४-५। २. वहीं।

अभिधर्म का उपदेश किया गया और उनके शिष्यानुशिष्य-क्रम में यह परम्परा आगे बढ़ती रही तथा सारिपुत्त, भद्दजि, सोभित, पियजाली, पियदस्सी, कोसियपुत्त, सिग्गव, सन्देह, मोग्गलिपुत्त, सुदत्त, धम्मिय, दासक, सोणक और रेवत आदि के रूप में भारतवर्ष में विद्यमान रही। इसी आचार्य परम्परा ने बुद्ध के इसके उपदेश के समय से लेकर तृतीय सङ्गीति तक अभिधर्म को संघ तक पहुंचाया और इसके बाद महिन्द, इट्टिय आदि के द्वारा यह सिंहल द्वीप ले जायी गयी तथा इन आचार्यों के शिष्यानुशिष्यों ने इसे आगे भी पल्लवित रखा[१]।

इस पर प्रश्न यह होता है कि प्रथम सङ्गीति के अवसर पर इस आचार्य-परम्परा में से किसी को सम्मिलित करके अभिधर्म-सम्बन्धी पृच्छा उनसे क्यों नहीं की गयी और उनके द्वारा उसका उत्तर प्राप्त होने के अनन्तर ही इसका सङ्गायन क्यों नहीं हुआ एवं जिस प्रकार विनय और धम्म (सुत्त) के सन्दर्भ में उपालि तथा आनन्द का उल्लेख करते हुए उन्हें व्यवस्थित किया गया, ऐसा अभिधर्म के सम्बन्ध में क्यों नहीं किया गया।

अभिधर्मपिटक को बुद्धवचन न माननेवालों का यह भी तर्क है कि इसके ग्रन्थों में सूत्रपिटक तथा विनयपिटक की भाँति निदान नहीं है, अतः वह बुद्धवचन नहीं है। इसका उत्तर स्थविरवादी-परम्परा ने यह दिया है कि निदान का होना बुद्धवचन मानने के लिए सम्यक् हेतु नहीं है। धम्मपद, सुत्तनिपात तथा जातक आदि में भी तो निदान नहीं है, फिर भी इन्हें बुद्धवचन माना ही जाता है। मण्डलारामवासी तिस्स स्थविर ने महाबोधि को ही इस पिटक का निदान कहा है। गामवासी सुमनदेव थेर के अनुसार इसका निदान है— "एकं समयं भगवा देवेसु विहरति तावतिंसेसु पारिच्छत्तकमूले पाण्डुकम्बलसिलायं। तत्र खो भगवा देवानं तावतिंसानं अभिधम्मकथं कथेसि...." आदि[२]। बुद्धघोषानुसार इसमें दो निदान हैं—अधिगम-निदान—दीपङ्कर बुद्ध से लेकर महाबोधिपर्यङ्क तक; देशना-निदान—धर्मचक्रप्रवर्तन से लेकर। इन दोनों निदानों के सम्यक् ज्ञान हेतु आचार्य बुद्धघोष ने "यह अभिधर्म किससे प्रभावित है, कहाँ परिपक्व हुआ है आदि कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्नों को उठाकर उनका समाधान भी प्रस्तुत किया है— उदाहरणार्थः—यह बोधि के प्रति अभिनीहार करनेवाली श्रद्धा से प्रभावित है तथा जातकों में यह परिपक्व हुआ है आदि[३]।

---

१. वहीं, पृ० १४-१५,२४,२७। २. वहीं, पृ० २५-२६।
३. वहीं, पृ० २७।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अभिधर्म का बुद्धवचनत्व सिद्ध करने में आचार्य बुद्धघोष ने भरपूर प्रयत्न किया है और स्थविरवादी-परम्परा इसे बुद्धवचन ही मानती है। परम्परा का आदर करते हुए मेरा स्पष्ट विचार है कि इसके बुद्धवचन होने में अभी भी सन्देह है और 'धम्म' के विकास-क्रम-स्वरूप इसकी स्थिति है। अधिक विचार करने पर यही स्पष्ट होता है कि अभिधर्म में उन्हीं प्रवृत्तियों का विस्तार प्राप्त होता है, जो बीज-रूप में सुत्तपिटक में प्राप्त सद्धर्म में उपलब्ध हैं। इस कारणवश इसे बुद्धवचन के सन्निकट अथवा एक प्रकार से उसका ही विस्तार लेते हुए यदि बुद्धवचन कहा जाय तो इसमें विशेष कठिनाई नहीं परिलक्षित होती। बुद्धघोष भी अभिधर्म शब्द की व्याख्या इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं—"तत्थ अभिधम्मो ति केनट्ठेन अभिधम्मो? धम्मातिरेक-धम्मविसेसट्ठेन। अतिरेक-विसेसत्थदीपको हि एत्थ अभिसद्दो"। अर्थात् अभिधर्म, यह किस अर्थ का प्रतिपादक होने से अभिधर्म है? धर्म का अतिरेक अथवा धर्म-विशेष अर्थ होने के कारण। अभिधर्म में प्रयुक्त 'अभि' शब्द अतिरेक तथा विशेष अर्थ को प्रकाशित करनेवाला है[१]। 'धर्म' को ही विशेष-रूप से प्रकट करने वाला अभिधर्म है। इससे यही ज्ञात होता है कि धर्मरूपी सूत्रों के विशेष अर्थ इससे ज्ञात होते हैं। आचार्य असङ्ग ने चार अर्थों को व्यक्त करने में 'अभि' शब्द की सार्थकता प्रदर्शित की है:—"अभिमुखतोऽथाभीक्ष्ण्यादभिभव-गतितोऽभिधर्मश्च"[२]। अर्थात् निर्वाण के अभिमुख होने से, धर्म का विविध वर्गीकरण करने से, विरोधी मतों का अभिभव करने से एवं सूत्रों के सिद्धान्त का अनुगमन करने से। इन कारणों से यदि अभिधर्म को साक्षात् बुद्धवचन न भी माना जाय तो विशेष धर्म की अभिव्यक्ति करने के कारण बुद्धवचन के समान ही इसे माना जा सकता है। स्थविरवादी अभिधर्म के अन्तर्गत ये सात प्रकरण हैं:— धम्मसङ्गणि, विभङ्ग, धातुकथा, पुग्गलपञ्ञत्ति, कथावत्थु, यमक, तथा पट्ठान।

सर्वास्तिवादी अभिधर्मपिटक

सर्वास्तिवादी अभिधर्मपिटक में भी सात ग्रन्थ परिगणित हैं, परन्तु ये ग्रन्थ स्थविरवादियों के ग्रन्थों के समान नहीं हैं। ये संस्कृत में अप्राप्त हैं तथा चीनी भाषा में सुरक्षित हैं। उन सात ग्रन्थों में से मुख्य ज्ञानप्रस्थान का चीनी-भाषा से संस्कृत में पुनरुद्धार प्रो० शान्तिभिक्षु शास्त्री ने विश्वभारती विश्वविद्यालय, शान्तिनिकेतन, से किया था, जो १९५५ ई० में वहीं से प्रकाशित हुआ था।

१. वहीं, पृ० १७-१८।
२. महायानसूत्रालङ्कार, ११:३, मिथिला विद्यापीठ संस्करण, १९७०।

सर्वास्तिवादी परम्परा अपने इस अभिधर्म को षड्पादाभिधर्म की संज्ञा से विभूषित करती है। इनमें से ज्ञानप्रस्थान शरीर की भाँति है और शेष छह ग्रन्थ उसके पाद-स्वरूप माने गये हैं। ये ग्रन्थ इस प्रकार हैं:—

ग्रन्थ	ग्रन्थकर्ता
१. ज्ञानप्रस्थानशास्त्र	आर्य कात्यायन
२. प्रकरणपाद	स्थविर वसुमित्र
३. विज्ञानकायपाद	स्थविर देवशर्मा या देवक्षेम
४. धर्मस्कन्धपाद	आर्य शारिपुत्र या मौद्गल्यायन
५. प्रज्ञप्तिशास्त्रपाद	आर्य मौद्गल्यायन
६. धातुकायपाद	पूर्ण या वसुमित्र
७. संगीतिपर्यायपाद	महाकौष्ठिल या शारिपुत्र

इसमें एक ही ग्रन्थ के कर्ताओं के अथवा करके जो नाम दिये गये हैं, वे चीनी तथा तिब्बती परम्परा के अनुसार हैं। यद्यपि इन ग्रन्थों के कर्त्ताओं के नाम उल्लिखित हैं, किन्तु कश्मीर-वैभाषिकों के अनुसार ये सभी बुद्धवचन ही हैं और इनका उपदेश शास्ता ने विभिन्न समयों एवं स्थानों पर विभिन्न प्रकार के शिष्यों के लिए किया था; किन्तु वैभाषिक तथा सौत्रान्तिक इससे सहमत नहीं है। उनके अनुसार इन ग्रन्थों का प्रणयन कालक्रमानुसार भिन्न-भिन्न आचार्यों द्वारा किया गया है। ई० लामोत ने अपने विशिष्ट ग्रन्थ 'हिस्ट्री ऑफ इन्डियन बुद्धिज़्म' में विस्तार-पूर्वक इसकी चर्चा की है तथा यह विषय वहीं द्रष्टव्य है[१]।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि अभिधर्म के बुद्धवचन होने के बारे में काफी विवाद है।

सच्चसङ्खेप के रचयिता: आचरिय चुल्लधम्मपाल

सच्चसङ्खेप के रचयिता को सामान्यत: 'आचरिय धम्मपाल' (आचार्य धर्मपाल) के नाम से उल्लिखित किया गया है और गौरव प्रदान करने के लिए इन्हें 'पोराणा' इस बहुवचन से भी अलंकृत किया गया है, जो यह अभिव्यक्त

---

१. ई० नामोत, हिस्ट्री ऑफ इन्डियन बुद्धिज़्म, (फ्रेन्च से आँग्ल-भाषा में अनूदित), पृ० १८४-१९१, लोवेन-ला-नेवुए, १९८८।

करता है कि ये गौरवपूर्ण प्राचीन आचार्य है[१]। किन्तु इसके रचयिता को स्पष्टता प्रदान करने के लिए उन्हें 'चुल्लधम्मपाल' के नाम से स्मृत किया गया है[२]। इसे स्पष्ट करना परमावश्यक है। धम्मपाल नाम के कई आचार्य हो गये हैं तथा नाम-साम्य के कारण इन सभी की कृतियों को लेकर विद्वानों में भ्रम की स्थिति उत्पन्न हो गयी है। अत: इस पर समीचीन रूप से विचार करना अत्यन्त आवश्यक प्रतीत होता है। आचार्य धम्मपाल अथवा धर्मपाल के रूप में हमें चार कृतिकार प्राप्त होते हैं और इस सन्दर्भ में इन चारों के सम्बन्ध में निम्नाङ्कित विवरण प्रस्तुत है—

(क) अट्ठकथाकार एवं टीकाकार आचरिय धम्मपाल— इन आचरिय धम्मपाल का उल्लेख गन्धवंस ग्रन्थ में आया है और वहाँ पर इन्हें जम्बुदीप अर्थात् भारत का निवासी बताया गया है[३]। साथ ही वहाँ पर उन्हें इन ग्रन्थों का रचनाकार कहा गया है— नेत्तिपकरण-अट्ठकथा, इतिवुत्तक-अट्ठकथा, उदानट्ठकथा, चरियापिटकट्ठकथा, थेरगाथाट्ठकथा, विभानवत्थु की विमलविलासिनी नामिका अट्ठकथा, विसुद्धिमग्ग की परमत्थमञ्जूसा नामक टीका, दीघनिकायादि चार निकायों की अट्ठकथा की लीनत्थपकासिनी नामिका टीका, नेत्ति-अट्ठकथा की टीका, बुद्धवंस-अट्ठकथा की परमत्थदीपनी नामक टीका, अभिधम्मट्ठकथा की लीनत्थवण्णना नामक टीका। इस प्रकार उन्हें इन चौदह ग्रन्थों का रचयिता कहा गया है। वहाँ पर स्पष्ट उल्लेख है— ''इमे चुद्दसमत्ते गन्धे अकासि''। अर्थात् इन चौदह ग्रन्थों की उन्होंने रचना की[४]।

सासनवंस के अनुसार वे इतिवुत्तक-अट्ठकथा, उदानट्ठकथा, चरियापिट-कट्ठकथा, थेर-थेरीगाथाट्ठकथा, विमानवत्थुट्ठकथा, पेतवत्थुट्ठकथा, नेत्ति-अट्ठकथा, विसुद्धिमग्ग की महाटीका, दीघनिकायट्ठकथा की टीका, मज्झिमनिकायट्ठकथा की टीका, संयुत्तनिकायट्ठकथा की टीका के लेखक कहे गये हैं[५]।

यद्यपि गन्धवंस तथा सासनवंस उन्नीसवीं सदी के ग्रन्थ हैं, तथापि त्रिपिटक के काल से लेकर आधुनिक युग तक के पालि-ग्रन्थों एवं ग्रन्थकारों

---

१. अभिधम्मत्थसङ्गह की विभाविनीटीका, रोमन संस्करण, पालि टेक्स्ट सोसायटी, लन्दन, १९८९।

२. गन्धवंस, पृ० ६०, रोमन संस्करण, जर्नल आफ पालि टेक्स्ट सोसायटी, लन्दन, १८८६।

३. वहीं, पृ० ६६।

४. वहीं, पृ० ६०।

५. सासनवंस, पृ० ३१, नालन्दा संस्करण, १९६१।

के विवरण इनमें प्राप्त हैं। आचरिय धम्मपाल द्वारा प्रस्तुत ग्रन्थों के सन्दर्भ में इन दोनों ग्रन्थों द्वारा दिये गये विवरणों में पर्याप्त साम्य विद्यमान हैं। गन्धवंस में थेरीगाथा-अट्ठकथा तथा पेतवत्थु-अट्ठकथा का उल्लेख नहीं हुआ है एवं सासनवंस में अङ्गुत्तरनिकायट्ठकथाटीका, बुद्धवंसट्ठकथाटीका और अभिधम्मट्ठ-कथा की लीनत्थवण्णना नामक अनुटीकादि के नाम प्राप्त नहीं है। साथ ही इसमें अङ्गुत्तरनिकाय की टीका के लेखक, समन्तपासादिका-अट्ठकथा पर सारत्थदीपनी नामक टीका के रचयिता सारिपुत्त थेर बताये गये हैं—"सारत्थदीपनिं नाम विनयटीकं, अङ्गुत्तरनिकायटीकञ्च परक्कमबाहुरञ्ञा याचितो सारिपुत्तथेरो अकासि[१]"। सासनवंस में अभिधम्म की मूलटीका पर अनुटीका लिखनेवाले का नाम भी आचरिय धम्मपाल ही दिया गया है[२], जबकि गन्धवंस में अभिधम्मट्ठकथा की लीनत्थवण्णना नामक अनुटीका का इन्हें रचयिता कहा गया है। लगता है कि ऐसे भ्रम नाम-साम्य के कारण ही हुए हैं।

सासनवंस में आचरिय धम्मपाल को पदरतित्थ-निवासी बताया गया है[३]। यह स्थान दमिळ (तमिल) राष्ट्र में स्थित था—"सो च आचरियधम्मपालथेरो सीहळदीपस्स समीपे दमिळरट्ठे पदरतित्थम्हि निवासितत्ता सीहळदीपे येव सङ्गहेत्वा वत्तब्बो[४]"। पदरतित्थ बदरतित्थ ही है। यह भारत के दक्षिण-पूर्वी समुद्र तट पर मद्रास से थोड़ा दक्षिण की ओर स्थिर है। अत: इससे यही ज्ञात होता है कि जन्मत: वे तमिल थे और उनका लेखन-कार्य दक्षिण भारत में सम्पन्न हुआ था। उनके ग्रन्थों के निगमन-वाक्य से यही प्रतीत होता है कि ये काञ्चीपुर (काञ्जीवरम्) के निवासी थे—"इति बदरतित्थ-महाविहारवासिना तिपिटक-परियत्तिधरेन.....भदन्त-धम्मपालाभिधान-महासामिपदेन विरचितं"[५] आदि।

पू० भिक्षु सद्धातिस्स ने अपने द्वारा सम्पादित उपासकजिनालङ्कार की भूमिका में यह प्रश्न उठाया है कि विसुद्धिमग्गमहाटीका (परमत्थमञ्जूसा) तथा प्रथम तीन निकाय—दीघ, मज्झिम एवं संयुत्त की अट्ठकथाओं की टीका के लेखक आचरिय धम्मपाल न होकर सच्चसङ्खेप के लेखक चुल्लधम्मपाल ही थे[६]।

---

१. वहीं। २. वहीं।

३-४. वहीं।

५. द्रष्टव्य—सच्चसङ्खेप का निगमन-वाक्य, पृ० २५, जर्नल आफ पालि टेक्स्ट सोसायटी. लन्दन, १९१८।

मलन्सेकर ने अपनी 'डिक्शनरी आफ पालि प्रापर नेम्स' में अभिधम्ममूलटीका के रचयिता आनन्दाचरिय को चुल्लधम्मपाल का गुरु स्वीकार दिया है। इसे मानते हुए ही पू० सद्धातिस्स जी ने अपना उपर्युक्त मत रखा है। उनका कथन है कि विसुद्धिमग्ग-महटीका के निगमन (कोलोफोन) में धम्मपाल ने कहा है कि सित्थगामपरिवेण निवासी विशुद्ध शीलवाले दाठानाग थेर के अनुरोध पर ही यह टीका उनके द्वारा लिखी गयी है। चूलवंस के अनुसार इस परिवेण का निर्माण सम्राट् सेन चतुर्थ (ईस्वी सन् ९५४-९५६) द्वारा उस स्थान पर किया गया था, जहाँ अपने राज्यारोहण के पूर्व वे भिक्षु-रूप में रहते थे। उनके उत्तराधिकारी राजा महिन्द चतुर्थ (ईस्वी सन् ९५६-९६२) ने थेर दाठानाग को नियुक्त किया था.... इस प्रकार विसुद्धिमग्गमहाटीका के रचयिता का समय यही है। इसके विपरीत आचरिय धम्मपाल काञ्चीपुर के निवासी थे और दक्षिण भारत के नागपट्टन में स्थित बदरतित्थविहार में निवास करते हुए उन्होंने अपना लेखन-कार्य किया तथा बादवाले धम्मपाल सिंहली भिक्षु थे, ऐसा ज्ञात होता है और इन्होंने अपना लेखनकार्य सीहलद्वीप (श्रीलंका में) किया। यदि यह सब सत्य है तो विसुद्धिमग्गमहाटीका के जिस लेखक ने इसे दसवीं सदी में लिखा, उन्हीं ने दीघ, मज्झिम तथा संयुत्तनिकाय की अट्ठकथाओं पर भी टीकाओं का प्रणयन किया। मूलटीकाकार आनन्दाचरिय के ज्येष्ठ शिष्य तथा सच्चसङ्क्षेप के रचयिता चुल्लंधम्मपाल ही ये धम्मपाल हो सकते हैं।

इसका उत्तर तर्कपूर्ण रीति से दीघनिकायट्ठकथाटीका की भूमिका में इसकी सम्पादिका लिलि डे सिल्वा ने देते हुए अन्त में यह कहा है कि चुल्लधम्मपाल को उपर्युक्त बड़ी टीकाओं का प्रणेता मानने पर यह कठिनाई प्रस्तुत होती है कि उन्हें तब चुल्ल (छोटे) शब्द से क्यों अभिहित किया गया । वास्तव में तो उन्हें चुल्लधम्मपाल न कह कर महाधम्मपाल कहना चाहिए। दीघनिकायट्ठकथाटीका में विस्तार जानने हेतु विसुद्धिमग्गमहाटीका को भी देखने के लिए कहा गया है। इसके अलावा उन्होंने अपने पक्ष में और भी तर्क प्रस्तुत करते हुए उपर्युक्त रचनाओं का प्रणेता आचरिय धम्मपाल को ही माना है, जो बुद्धदत्त एवं बुद्धघोष की परम्परा में बुद्धघोष में पश्चात् आविर्भूत हुए हैं। सित्थगामपरिवेण वाले तर्क पर लिलि डे सिल्वा का विचार यह है कि यह तथा काञ्चीपुर आदि स्थान मद्रास प्रेसिडेन्सी में ही इर्द-गिर्द स्थित हैं और इसके बल पर विसुद्धिमग्गमहाटीकादि को दसवीं सदी में लिखा जाना सिद्ध करना

समीचीन नहीं है। विस्तार हेतु उनके द्वारा प्रस्तुत तर्क दीघनिकाय-अट्ठकथा की टीका की भूमिका में द्रष्टव्य हैं।[७]

आचरिय धम्मपाल ने सीहळदीप (श्रीलंका) के महाविहार में निश्चित रूप से अध्ययन अवश्य किया था, किन्तु उन्होंने अपनी रचनाएँ भी वहीं लिखीं, इस सम्बन्ध में अन्तिम रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता, क्योंकि पेतवत्थु-अट्ठकथा के निदान में स्पष्ट रूप से उनके द्वारा कहा गया है कि महाविहार की परम्परा के अनुसार ही इस ग्रन्थ की व्याख्या को वे प्रस्तुत कर रहे हैं[८]। बुद्धघोषाचार्य के सम्बन्ध में भी हमें यह ज्ञात है कि थेरवाद सम्बन्धी व्याख्याएँ और अट्ठकथाएँ श्रीलंका के ही महाविहार में प्राप्त थीं और वहाँ के भिक्षु पठन-पाठन में उनका व्यवहार करते थे। भारत में उनका सर्वथा अभाव था तथा वहाँ विद्यमान उन अट्ठकथाओं को मागध-भाषा में प्रस्तुत करने के उद्देश्य से ही वे श्रीलंका गये थे, जिससे सभी के लिए वे सुलभ हो सकें। इसी प्रकार आचरिय धम्मपाल ने भी महाविहार की परम्परा से प्राप्त इन व्याख्याओं एवं अट्ठकथाओं का अध्ययन किया था। स्वतः तमिल होने के कारण तमिल में विद्यमान अट्ठकथाओं के अध्ययन-कार्य में भी उन्हें सौविध्य तो था ही। खुद्दकनिकाय के उन ग्रन्थों पर इन्होंने अट्ठकथाएँ लिखीं, जिन्हें बुद्धघोषाचार्य ने छोड़ दिया था। इनके अतिरिक्त बुद्धघोष द्वारा अन्य निकायों पर प्रस्तुत अट्ठकथाओं पर लीनत्थपकासिनी अथवा लीनत्थवण्णना नामक टीकाएँ धम्मपाल द्वारा लिखी गयीं। श्री भरतसिंह उपाध्याय ने अपने 'पालि साहित्य का इतिहास' नामक ग्रन्थ में जो यह लिखा है कि इनकी रचनाओं में मात्र खुद्दकनिकाय के ग्रन्थों पर प्रस्तुत परमत्थदीपनी नामक अट्ठकथा ही प्राप्त है तथा शेष में से कुछ भी प्राप्त नहीं है[९]— यह कथन नितान्त असमीचीन है। दीघनिकाय-अट्ठकथा पर लीनत्थवण्णना नामक टीका रोमनाक्षरों में पालि टेक्स्ट सोसायटी, लन्दन, द्वारा तीन भागों में प्रकाशित हो चुकी है, जिसका उल्लेख हम ऊपर कर चुके हैं। इसे हम गौरवमयी टीका की संज्ञा प्रदान कर सकते हैं। विसुद्धिमग्ग-महाटीका परमत्थमञ्जूसा का भी मूल के साथ तीन भागों में प्रकाशन सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय से हो चुका है[१०] तथा खुद्दकनिकाय के ग्रन्थों पर इनके द्वारा

६-७. दीघनिकाय-अट्ठकथा-टीका, भाग १, भूमिका, पृ० ३७-४८, रोमन संस्करण, लन्दन, १९७०।

८. दि पालि लिट्रेचर आफ सीलोन, पृ० ११३, सीलोन, १९५८।

९. पालि साहित्य का इतिहास, पृ० ५३१, इलाहबाद, संवत् २००८।

१०. सन् १९६९-१९६२।

प्रस्तुत परमत्थदीपनी नामक अट्ठकथा का प्रकाशन पालि टेक्स्ट सोसायटी, लन्दन, से काफी पहले हो चुका है[१]।

यद्यपि आचरिय धम्मपाल ने अपनी अट्ठकथाओं में बुद्धघोषाचार्य की अट्ठसालिनी एवं धम्मपदादि अट्ठकथाओं से सामग्री ली है, किन्तु व्याख्या के कार्य में अपनी रचनाओं में ये अत्यन्त मौलिक तथा सटीक हैं और उनमें स्थान-स्थान पर इनकी विद्वत्ता स्पष्ट रूप से झलकती है। इससे इनका निखरा हुआ व्यक्तित्व साफ नजर आता है तथा इस सन्दर्भ में इनकी जितनी भी प्रशंसा की जाय थोड़ी ही होगी।

सच्चसङ्क्षेप के रचयिता के विषय में एक महत्त्वपूर्ण बात यहाँ पर विशेषरूप से ध्यातव्य है कि गन्धवंस में चुल्लधम्मपाल के गुरु आनन्दाचरिय का नाम क्रम में इन धम्मपालाचरिय के पहले आया है और इसके बाद इनका— "आनन्दो नामाचरियो सत्ताभिधम्मगन्धट्ठकथाय मूलटीकं नाम टीकं अकासि[२]"। क्या यह आनन्दाचरिय के पूर्ववर्ती होने का सङ्केत है? हम इसके आधार पर निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कह सकते, किन्तु यह विचारणीय विषय अवश्य है।

गन्धवंस तथा सासनवंस में कहीं भी यह उल्लेख नहीं प्राप्त होता कि धम्मपालाचरिय ने सच्चसङ्क्षेप नामक ग्रन्थ की भी रचना की थी, किन्तु बाद के लोगों ने नाम-साम्य के कारण इन्हें ही सच्चसङ्क्षेप का रचयिता मान लिया और इसके उद्धरणों को आचरिय धम्मपाल का कह दिया। सबसे विचित्र बात तो सच्चसङ्क्षेप के रोमन संस्करण के प्रकाशन के सन्दर्भ में हुई। उसकी संक्षिप्त भूमिका में तो सच्चसङ्क्षेप के रचयिता को चुल्लधम्मपाल स्पष्ट रूप से कहा गया, किन्तु ग्रन्थ के मूल के अन्त में आचरिय धम्मपाल से सम्बन्धित निगमन-वाक्य सम्पादक द्वारा दिया गया, पता नहीं किस मानसिकता अथवा तर्क के कारण[३]। इस पर हम विशेष चर्चा चुल्लधम्मपाल पर विचार करते हुए आगे करेंगे।

चीनी यात्री युवान्-च्वाङ् ने अपने प्रसिद्ध यात्रा-विवरण में काञ्चीपुर की यात्रा के प्रसङ्ग में धर्मपालाचार्य का वर्णन प्रस्तुत किया है[४], इसको हम आगे प्रस्तुत करने जा रहे हैं।

---

१. पालि टेक्स्ट सोसायटी, लन्दन, १८९२ से लेकर इसके आगे।

२. गन्धवंस, पूर्वोक्त, पृ० ६०।

३. सच्चसङ्क्षेप, पूर्वोक्त, पृ० २५।

४. रिकार्ड्स आफ दि वेस्टर्न कन्टरीज़, बुक १०, पृ० २२९-२३० रिप्रिन्ट, दिल्ली, १९६९।

(ख) युवान्-च्वाङ् द्वारा अपने यात्रा-विवरण में प्रस्तुत काञ्चीपुर के धर्मपालाचार्य—युवान्-च्वाङ् ने अपने यात्रा-विवरण में द्राविड़ देश की अपनी यात्रा के प्रसङ्ग में इस देश की राजधानी काञ्चीपुर का वर्णन करते हुए महायान के सङ्घारामों का उल्लेख किया है तथा काञ्चीपुर को बोधिसत्त्व धर्मपाल का निवास-स्थान बताया है। उनके सम्बन्ध में एक लम्बी कथा भी वहाँ पर उन्होंने उद्धृत की है। ये बोधिसत्त्व नालन्दा के आचार्य थे तथा बौद्धधर्म के महायान सम्प्रदाय के अनुयायी थें। ये उपर्युक्त आचरिय धम्मपाल से भिन्न व्यक्ति थे। लगता है कि काञ्चीपुर पहुँचने पर उन्होंने वहाँ के निवसियों से उपर्युक्त आचरिय धम्मपाल के सम्बन्ध में यह कथा-विवरण सुना हो और इसे उन्होंने महायानी आचार्य धर्मपाल से जोड़ दिया हो। इस कथा में धर्मपाल को उस देश के मंत्री के पुत्र के रूप में प्रस्तुत करते हुए वैराग्यवशात् इनके प्रवजित होने का विवरण प्रस्तुत किया गया है, जो वहीं द्रष्टव्य है।

इसके आधार पर उदान ग्रन्थ के रोमन संस्करण की भूमिका में इसके सम्पादक स्टेन्थल ने इन्हें नालन्दा विश्वविद्यालय का प्रसिद्ध आचार्य मान लिया[१] तथा रीज-डेविड्स एवं कारपेन्टर ने दीघनिकाय-अट्ठकथा सुमङ्गलविलासिनी के उपोद्घात में इस मत का समर्थन करते हुए यह अभिव्यक्त किया कि आचरिय धम्पाल का जन्म काञ्चीपुर में हुआ था और इन्होंने नालन्दा में अपने लेखन-कार्य को सम्पन्न किया[२]। बाद में इन्साईक्लोपीडिया आफ रिलिजन ऐण्ड एथिक्स में उन्होंने अपने पूर्वोक्त विचार को बदलते हुए यह स्थापना की कि युवान्-च्वाङ् पालि के आचरिय धम्मपाल के विषय में कुछ नहीं जानता था और काञ्चीपुर पहुँचने पर वहाँ के निवासियों ने इन्हीं के बारे में उन्हें सूचना दी, जिसे भ्रम के वश से उसने महायानी एवं संस्कृत के आचार्य धर्मपाल से जोड़ कर अपना विवरण प्रस्तुत कर दिया[३]।

(ग) अरिमद्दनपुर के धम्मपाल—अरिमद्दनपुर (बर्मा) निवासी भी एक धम्मपालाचरिय हैं, जिनका विवरण हमें गन्धवंस[४] तथा मेबिल बोड कृत 'दि पालि लिटरेचर आफ बर्मा' की भूमिका में[५] प्राप्त है।

---

१. उदान, भूमिका, पृ० ७, रोमन संस्करण, पालिटेक्स्ट सोसायटी, लन्दन, १८८५।

२. दीघनिकायअट्ठकथा, भा० १, उपोद्घात, पृ० ८, रोमन संस्करण, पालि टेक्स्ट सोसायटी, लन्दन, १८८६।

३. ई०आर०ई०, भाग ४, पृ० ७०१।

४. पूर्वोक्त, पृ० ६७।

५. दि पालि लिटरेचर आफ बर्मा, भूमिका, पृ० ३, आर०ए०एस०, लन्दन, १९०९।

(घ) सच्चसङ्क्षेप के रचयिता चुल्लधम्मपाल—पहले यह लिखा जा चुका हैं कि सच्चसङ्क्षेप के रचयिता आचरिय चुल्लधम्मपाल हैं। गन्धवंस में स्पष्ट उल्लेख है—"आनन्दाचरियस्स जेट्ठसिस्सो चुल्लधम्पालो नामाचरियो सच्चसङ्क्षेपं नाम आकासि[१]"। किन्तु सासनवंस में यह विवरण आया है—सच्चसङ्क्षेपं धम्मपालथेरो[२]"। बाद के टीकाकारों आदि ने सच्चसङ्क्षेप के कर्त्ता के रूप में आचरिय धम्मपाल ही लिखा है। यहाँ तक कि बुद्धसासन समिति, बर्मा, से १९६२ ई० प्रकाशित सच्चसङ्क्षेप के रचयिता के रूप में भदन्ताचरिय-धम्मपाल थेर की यह कृति है, यही उल्लिखित है। इसकी भूमिका में यह विवरण प्राप्त है—"सच्चसङ्क्षेपो पन आचरियधम्मपालत्थेरेन विरचितो ति ञायति; वुत्तञ्च सासनवंसदीपिकायं—'सच्चसङ्क्षेपं धम्मपालत्थेरो (अकासी') ति। मणिसार-मञ्जूसायं च ततियपरिच्छेदवण्णनायं 'आहु कथेसुं सच्चसङ्क्षेपे—धम्मपालाचरियस्स गरुभावतो पोराणा ति बहुवचनवसेन सोवेको वुत्तो' ति च, 'सच्चसङ्क्षेपे नाम पकरणे धम्मपालाचरियेन वुत्तं ति योजना' ति च"[३]। बुद्धसासन समिति, बर्मा, द्वारा यह ग्रन्थ अभिधम्मावतार, नामरूपपरिच्छेद तथा परमत्थविनिच्छय आदि तीन अन्य ग्रन्थों के साथ प्रकाशित हुआ है। इनमें अभिधम्मावतार के रचयिता आचरिय बुद्धदत्त हैं तथा नामरूपपरिच्छेद एवं परमत्थविनिच्छय के प्रणेता अभिधम्मत्थसङ्गह के कर्त्ता आचरिय अनुरुद्ध।

मललसेकर ने अपनी 'डिक्शनरी आफ पालि प्रापर नेम्स' में धम्मपाल के सम्बन्ध में लिखा है कि सच्चसङ्क्षेप के लेखक सीलोन के थेर धम्मपाल हैं, जिन्हें सामान्यत: चुल्लधम्मपाल के नाम से अभिहित किया जाता है[४]। अपने ग्रन्थ 'दि पालि लिटरेचर आफ सीलोन' में गन्धवंस का आश्रय लेते हुए उन्होंने इन्हें चुल्लधम्मपाल ही माना है और सद्धम्मसङ्गह में आये इस विवरण का खण्डन किया है कि सच्चसङ्क्षेप के रचयिता आनन्द हैं। वहीं पर इन्होंने यह भी लिखा है कि ये अभिधम्ममूलटीकाकार वनरतन आनन्द के शिष्य थे[५]।

हम पहले यह लिख चुके हैं कि प्रसिद्ध अट्ठकथाकार आचरिय धम्मपाल ने सच्चसङ्क्षेप की रचना की थी, इसका कहीं भी उल्लेख गन्धवंस में प्राप्त

---

१. गन्धवंस, पूर्वोक्त, पृ० ६०।

२. सासनवंस, पूर्वोक्त, पृ० ३१।

३. पृ०, ग।

४. पृ० ११४६।

५. पृ० २०२-२०३।

नहीं है। सच्चसङ्खेप के रचयिता धम्मपालथेर हैं, सासनवंस का यह उल्लेख इन्हीं चुल्लधम्मपाल की ही ओर इंगित करता है, क्योंकि यह अट्ठकथाकार आचरिय धम्मपाल के सन्दर्भ में वहाँ विद्यमान न होकर अन्य रचनाकारों के सम्बन्ध में प्राप्त विवरण के साथ सन्निविष्ट है[१]।

सच्चसङ्खेप के रोमन संस्करण में जो निगमन-वाक्य (कोलोफोन) दिया गया है, वह इस ग्रन्थ के रचनाकार के रूप में प्रसिद्ध अट्ठकथाकार आचरिय धम्मपाल को ही अभिव्यक्त करता है[२]। परन्तु इसके सम्पादक ने अपनी भूमिका में स्पष्ट रूप से लिखा है कि सच्चसङ्खेप के रचयिता प्रसिद्ध अट्ठकथाकार और टीकाकार काञ्चीपुर (काञ्जीवरम्) निवासी आचरिय धम्मपाल नहीं हैं, अपितु इसके प्रणेता अभिधम्ममूलटीका के रचनाकार आनन्दाचरिय के शिष्य चुल्लधम्मपाल हैं[३], फिर भी पता नहीं किस उद्देश्य से प्रसिद्ध अट्ठकथाकार एवं टीकाकार आचरिय धम्मपाल को ही दिग्दर्शित करानेवाले इस निगमन-वाक्य को सम्पादक महोदय ने सच्चसङ्खेप के रोमन संस्करण के मूल पाठ में रखा है। इस पर उन्होने पाठभेद भी प्रस्तुत किया है कि यह निगमन-वाक्य इन्डिया आफिस लाईब्रेरी में ताड़पत्रों पर विद्यमान मान्डले संग्रह की इस ग्रन्थ की प्रति में विद्यमान नहीं है[४]। इस स्थिति में इसे मूलपाठ में रखने का उनका कार्य नितान्त असमीचीन है। सम्पादक ने अपनी भूमिका में यह भी स्पष्ट किया है कि सच्चसङ्खेप ग्रन्थ की सिंहली तथा बर्मी लिपियों में प्राप्त कई पाण्डुलिपियों तथा प्रकाशित संस्करणों का अवलोकन करने के पश्चात् ही उन्होंने इस ग्रन्थ का सम्पादन किया है और पाठों के सन्दर्भ में उत्पन्न शंका के निवारणार्थ इन्डिया आफिस लाईब्रेरी में ताड़पत्र पर प्राप्त मान्डले संग्रह की इसकी प्रति का भी उनके द्वारा अवलोकन किया गया है[५], किन्तु उन्हीं के अनुसार यह निगमन-वाक्य मान्डले संग्रह की प्रति में नहीं है[६]। इस प्रकार उनकी दृष्टि से भी सन्देह उत्पन्न करनेवाले इसको मूल में देना एक प्रकार से 'वदतो व्याघात' ही है। बुद्धसासन समिति, बर्मा, ने अपने संस्करण में न तो इसे मूल में रखा है और न पाठभेद के रूप में[७]।

---

१. सासनवंस, पूर्वोक्त, पृ० ३१।
२. सच्चसङ्खेप, रोमन संस्करण, पूर्वोक्त, पृ० २५।
३. वहीं पृ० २।
४. वहीं पृ० २५।
५. वहीं, पृ० २।
६. वहीं, पृ० २५।
७. पृ० ३४।

ऊपर यह उल्लिखित किया जा चुका है कि चुल्लधम्मपाल अभिधम्म-मूलटीकाकार वनरतन आनन्द के ज्येष्ठ शिष्य थे। इन्होंने इस मूलटीका पर अनुटीका का प्रणयन किया था[१]। इस मूलटीका की रचना कस्सप की संगीति (११६५ ई०) के पूर्व निश्चित रूप से ही चुकी थी और चुल्लधम्मपाल ने, जो निश्चित रूप से बारहवीं सदी से पूर्व हो चुके थे, इस पर अनुटीका लिखी थी[२]। अरञ्ञवासी अथवा वनवासी सम्प्रदाय की सूचना कलिंग-सम्राट् अग्गबोधि के शासन-काल (५९८-६०८ई०) से ही प्राप्त होती है एवं उसी समय भिक्षु-जीवन व्यतीत करने के लिए सीहल द्वीप में इनका आगमन हुआ; तथा महास्थविर जोतिपाल के संरक्षकत्व में बौद्ध संघ में ये प्रविष्ट हुए। रसवाहिनी ग्रन्थ के प्रणेता वेदेह ने अपने इस ग्रन्थ में वनवासी सम्प्रदाय के प्रारम्भ का विवरण दिया है, क्योंकि वे भी इसी सम्प्रदाय के थे। गन्धवंस द्वारा हमें यह सूचना आनन्दाचरिय के बारे में प्राप्त होती है कि वे भारत के ही निवासी थे और उनका काल सम्भवत: आठवीं अथवा नवीं शताब्दी था एवं उन्होंने बुद्धमित्त के अनुरोध पर अभिधम्ममूलटीका की रचना की, जिसे महास्थविर कस्सप और उनके सहयोगियों ने पुन: संशोधित किया था। इन्हें वनरतन आनन्द अथवा वनरतन तिस्स भी कहा जाता है, क्योंकि वनवासी सम्प्रदाय से उनका सम्बन्ध था[३]।

सारिपुत्त की मंडली के काल में सीहल द्वीप में वनवासी अथवा अरञ्ञवासी सम्प्रदाय राजनीतिक उथल-पुथल से अप्रभावित रहते हुए अपने को महाविहार की परम्परा से सम्पृक्त रखे हुए था। महाविहार की परम्परा ही उनके धार्मिक जीवन में विद्यमान थी। पंडित पराक्रम की संगीति में भी उनका अपूर्व योगदान था[४]। इसी से सारिपुत्त के शिष्य सुमङ्गल स्वामी ने अभिधम्मत्थसङ्गह की टीका विभाविनी में अपनी स्थापना को पुष्ट करने के लिए आनन्दाचरिय की अभिधम्ममूलटीका तथा चुल्लधम्मपाल के सच्चसङ्खेप के अनेक उद्धरण प्रस्तुत किये हैं, जिनका उल्लेख हम आगे करेंगे। उन्होंने चुल्लधम्मपाल के उद्धरण धम्मपालाचरिय या पोराणा कह कर ही दिये हैं। लगता है कि चुल्लधम्मपाल का नाम धम्मपाल थेर ही था तथा उन्हें अट्ठकथाचरिय धम्मपाल से पृथक् करने के लिए उनके नाम में चुल्ल (छोटे) यह शब्द बाद में जोड़ा गया।

---

१. दि पालि लिटरेचर आफ सीलोन, पूर्वोक्त, पृ० २११।

२. वहीं, पृ० २१०-२१२।

३. वहीं, पृ० २१०।

४. वहीं।

अरञ्ञवासी सम्प्रदाय की स्थिति बारहवीं-तेरहवीं सदी तक बनी रही और इस समय एक दूसरे महास्थविर आनन्द विद्यमान थे, जो सारिपुत्त के शिष्य उदुम्बरगिरि मेधङ्कर के शिष्य थे। इन्हीं के शिष्य कच्चायन व्याकरण सम्प्रदाय के ग्रन्थ रूपसिद्धि के प्रणेता बुद्धप्पिय थे, जिन्होंने अपने गुरु आनन्द को ताम्रपर्णी-ध्वज की संज्ञा से अभिहित किया है[१]। सामान्य रूप से इन्हीं आनन्द को नाम-साम्य के आधार पर अभिधम्ममूलटीका के रचयिता के रूप में मान लिया जाता है, किन्तु पहले यह प्रदर्शित किया जा चुका है कि अभिधम्ममूलटीका के रचनाकार सन् ११६५ की कस्सप थेर की संगीति के पूर्व ही अपने इस ग्रन्थ की रचना कर चुके थे एवं उनके शिष्य चुल्लधम्मपाल अथवा धम्मपाल, जो बारहवीं सदी के पूर्व में विद्यमान थे, इस पर टीका लिख चुके थे।

सारिपुत्त के शिष्य सुमङ्गल स्वामी द्वारा अभिधम्ममूलटीका एवं सच्चसङ्खेप के प्रस्तुत उद्धरण

सुमङ्गल स्वामी ने अभिधम्मत्थसङ्गह की टीका विभाविनी में अनेक स्थलों पर अभिधम्ममूलटीका के उद्धरण प्रस्तुत किये हैं, जिन्हें इसके रोमन संस्करण के आधार पर दर्शाया जा रहा है:—

(१) "अपरे पन कुसलादीनं कुसलादिभावसाधनं हेतुभावो ति वदन्ति (मूलटीका, सिंहली संस्करण, भाग३, पृ०१६८)[२]।

(२) "मूलटीकाकारादयो पन अञ्ञथा पि तं साधेन्ति" (मूलटीका, सिंहली संस्करण, भाग२, पृ०९५)[३]।

(३) "एवञ्च कत्वा वुत्तं आनन्दाचरियेन—'पञ्चद्वारे च आपाथमागच्छन्तं पच्चुप्पन्नं कम्मनिमित्तं आसन्नकप्पकम्मारम्मणसन्ततियं उप्पन्नं, तं सदिसं ति दट्ठब्बं'" (मूलटीका, सिंहली संस्करण, भाग२, पृ०१०५)[४]।

(४) "रूपलोके गन्धादीनं अभाववादिमतम्पि हि तत्थ तत्थ आचरियेहि पटिक्खित्तमेव" (मूलटीका, सिंहली संस्करण, भाग २, पृ०१०८-१०९)[५]।

---

१. वहीं, पृ० २११।

२. विभाविनी, रोमन संस्करण, पृ० ९५, पालि टेक्स्ट सोसायटी, लन्दन, १९८९।

३. वहीं, पृ० १४२।

४. वहीं, पृ० १४६।

५. वहीं, पृ० १५८।

(५) ''अपरे पन चित्तस्स ठितिखणं'' (मूलटीका, सिंहली संस्करण, भाग १, पृ० २१-२२)[१]।

(६) ''भङ्गक्खणे च रूपुप्पादं पटिसेधेन्ति'' (मूलटीका, सिंहली संस्करण, भाग २, पृ० २३-२४)[२]।

(७) ''आनन्दाचरियादयो पन सब्बेसम्पि चुतिचित्तं रूपं न समुट्ठापेती ति वदन्ति...। (मूलटीका, सिंहली संस्करण, भाग १, पृ० १५१-१५२)[३]।

(८) ''टीकाकारमतेन एकादसमे सत्ताहे वा'' (मूलटीका, सिंहली संस्करण, भाग ३, पृ० १३०-१३१)[४]।

(९) ''आनन्दचरियो पन भणति—'पादकज्झानतो वुट्ठाय पच्चुप्पन्नादिविभागं अकत्वा केवलं इमस्स चित्तं जानामिच्चेव परिकम्मं कत्वा...... अनिट्ठे च ठाने नानारम्मणता दोसो नत्थि अभिन्नाकारप्पवत्तितो'' ति (मूलटीका, सिंहली संस्करण, भाग १, पृ० ९४)[५]।

सुमङ्गल स्वामी द्वारा अभिधम्मावतार की टीका अभिधम्मत्थ-विकासिनी में सच्चसङ्खेप की गाथाओं के उद्धरण

(१) सातवें परिच्छेद की गाथा सं० ३७६ की वण्णना में स०स० की गाथा सं० १७६ का उल्लेख (अभिधम्मत्थविकासिनीटीका, भाग २, पृ० ३८, बुद्धसासन समिति, बर्मा, संस्करण, १९६४)।

(२) नवम परिच्छेद की गाथा सं० ५६४-५६७ की वण्णना में स०स० की गाथा सं० १७३ का उल्लेख (वहीं, पृ० ९६)।

सुमङ्गल स्वामी द्वारा अभिधम्मत्थसङ्गह की विभाविनीटीका (रोमन संस्करण) में सच्चसङ्खेप की गाथाओं के उद्धरण

सच्चसङ्खेप की कारिका संख्या	विभाविनी के रोमन संस्करण की पृ०सं०
कारिका ७४	पृ० ९५
कारिका १७१	पृ० १०१
कारिका ६०	पृ० १०८

१-२. वहीं। ३. वहीं, पृ० १५९।
४. वहीं, पृ० १६३। ५. वहीं, पृ०२०३।

कारिका १७३	पृ० १४६
कारिका १७६	पृ० १०९
कारिका ६२	पृ० १४३
कारिका १६४-१६५	पृ० १४५

मणिसारमञ्जूसाटीका में सच्चसङ्खेप की गाथाओं की व्याख्या

विभाविनी में उद्धृत सच्चसङ्खेप की इन कारिकाओं की व्याख्या अरियवंस द्वारा रचित इसकी व्याख्या मणिसारमञ्जूसा, भाग १, भाग २, बुद्धसासन समिति, बर्मा, द्वारा सन् १९६३ ई० एवं १९६४ ई० में क्रमशः प्रकाशित, में इस प्रकार से है—

सच्चसङ्खेप की कारिका सं०	मणिसारमञ्जूसा की भाग-सहित पृ०सं०
कारिका सं० ७४	भाग १, पृ० ३७७
कारिका सं० १७१	भाग १, पृ० ४०७-४०८
कारिका सं० ६०	भाग १, पृ० ४४२-४४३
कारिका सं० १७३	भाग १, पृ० ४५२
कारिका सं० १७६	भाग १, पृ० ४९१
कारिका सं० ६२	भाग २, पृ० ८४
कारिका सं० १६४-१६५	भाग २, पृ० ९४ (यहाँ पर बहुत विस्तार से व्याख्या की गयी है)।

इस प्रकार से अपने मत की पुष्टि तथा व्याख्यान में विभाविनी नामक टीका के प्रणेता सारिपुत्त के शिष्य सुमङ्गल स्वामी ने सच्चसङ्खेप की उपर्युक्त कारिकाओं अथवा गाथाओं को उद्धृत किया है।

सच्चसङ्खेप की विषय-वस्तु तथा इसके परिच्छेद

सच्चसङ्खेप अभिधर्म-सम्बन्धी एक लघु ग्रन्थ है। इसके शीर्षक को सामान्य रूप से समझने में यही ज्ञात होता है कि इसमें चार आर्य-सत्यों का विवरण प्रस्तुत किया गया है। किन्तु यहाँ पर आर्यसत्य व्याख्यायित नहीं है, अपितु सम्मुति (संवृति) एवं परमत्थ (परमार्थ) सत्यों के परिप्रेक्ष्य में आभिधार्मिक तत्त्व यहाँ पर निरूपित हैं।

मज्झिमनिकाय की अट्ठकथा में यह विवरण उल्लिखित है कि भगवान् बुद्ध की देशना अर्थात् उपदेश दो प्रकार के सत्यों को ध्यान में रख कर दिये गये हैं—संवृतिसत्य एवं परमार्थसत्य, अथवा सम्मुतिदेसना तथा परमत्थदेसना। सम्मुतिदेसना पुद्गल, सत्त्व, स्त्री, पुरुष, क्षत्रिय, ब्राह्मण, देव, मार आदि को व्यक्त करने वाली देसना है और अनित्य, दु:ख, अनात्म, स्कन्ध, आयतन, स्मृत्युपस्थानादि परमत्थदेसना के अन्तर्गत व्याख्यायित होते हैं:—

''बुद्धस्स भगवतो दुविधा देसना—सम्मुतिदेसना, परमत्थदेसना चा ति। तत्थ पुग्गलो, सत्तो, इत्थी, पुरिसो, खत्तियो, ब्राह्मणो, देवो मारो ति एवरूपा सम्मुतिदेसना; अनिच्चं, दुक्खं, अनत्ता, खन्धा, धातू, आयतनानि, सतिपट्ठाना ति एवरूपा परमत्थदेसना। तत्थ भगवा ये सम्मुतिवसेन देसनं सुत्वा अत्थं पटिविज्झित्वा मोहं पहाय विसेसमधिगन्तुं समत्था, तेसं सम्मुतिदेसनं देसेति; ये पन परमत्थवसेन देसनं सुत्वा अत्थं पटिविज्झित्वा मोहं पहाय विसेसमधिगन्तुं समत्था तेसं परमत्थदेसनं देसेति[१]''।

इसी को उपसंहार रूप में वहीं कहा गया है:—

''दुवे सच्चानि अक्खासि सम्बुद्धो वदतं वरो।
सम्मुतिं परमत्थं च ततियं नूपलब्भति।।

सङ्केतवचनं सच्चं लोकसम्मुतिकारणा।
परमत्थवचनं सच्चं धम्मानं भूतकारणा।।

तस्मा वोहारकुसलस्स लोकनाथस्स सत्थुनो।
सम्मुतिं वोहरन्तस्स मुसावादो न जायती''।। ति[२]।

इन्हीं दो प्रकार के सत्यों अथवा देशनाओं की अभिव्यक्ति हेतु सच्चसङ्क्षेप ग्रन्थ की रचना आचरिय चुल्लधम्मपाल द्वारा की गयी है और मङ्गलगाथा के पश्चात् गाथा संख्या ३-४ में उन्होंने इसी ओर इंगित किया है। इस ग्रन्थ के गाथा सं० ५ से लेकर गाथा सं० ३६६ तक परमत्थसच्च का वर्णन किया गया है तथा गाथा सं० ३६७ से आगे सम्मुतिसच्च का।

---

१. म०नि०अ० १, पृ० १७७, नालन्दा संस्करण, १९७५; अ०नि०अ०भा० १, पृ० १०७, नालन्दा संस्करण, १९७६; सारत्थदीपनीटीका, भा० १, पृ० ६७, स०सं०वि० संस्करण, १९९१।

२. वहीं क्रमशः, पृ० ७८; पृ० १०८; पृ० ६७।

इस तथ्य को विस्तार से उद्घाटित करने के लिए बौद्ध-दर्शन के संस्कृत में प्राप्त ग्रन्थों से भी पाद-टिप्पणियाँ वहीं पर दे दी गयी हैं। विद्वानों का यह विचार है कि जब तक अनुरुद्धाचरिय द्वारा अभिधम्मत्थसङ्गह की रचना नहीं हुई थी, तब तक अभिधर्म के तत्त्वों का परिज्ञान कराने के लिए प्रचलित ग्रन्थ के रूप में बौद्ध-समाज में सच्चसङ्खेप का ही प्रचार था और बाद में इसका स्थान अभिधम्मत्थसङ्गह ने ले लिया।[1] मङ्गलगाथा के पश्चात् अभिधम्मत्थसङ्गह की भी दूसरी गाथा अभिधर्म के अर्थों को परमार्थ रूप में व्यक्त करने के लिए ही लिखी गयी है:—

''तत्थ वुत्ताभिधम्मत्था चतुधा परमत्थतो।

चित्तं चेतसिकं रूपं निब्बानमिति सब्बथा''।।

यह ग्रन्थ निम्नाङ्कित पाँच परिच्छेदों में विभक्त है:—रूपसङ्खेप, खन्धत्तयसङ्खेप, चित्तपवत्तिपरिदीपनपरिच्छेद, विञ्ञाणक्खन्धपकिण्णकनयसङ्खेप, निब्बानपञ्ञत्तिपरिदीपनपरिच्छेद। इन परिच्छेदों के शीर्षक के अनुसार ही उनमें विषय-वस्तु का वर्णन किया गया है और परिच्छेद से सम्बन्धित सम्पूर्ण सामग्री वहाँ पर गाथा-रूप में प्रस्तुत कर दी गयी है।

इस लघु ग्रन्थ का प्रारम्भ रूप के वर्णन से किया गया है, जो अभिधर्म-पिटक के ग्रन्थ विभङ्गपालि को आधार बनाकर प्रस्तुत किया गया है। इसकी तुलना में अभिधम्मत्थसङ्गह का प्रारम्भ चित्त के वर्णन से होता है, जिसका आधार अभिधम्मपिटक का ही ग्रन्थ धम्मसङ्गणिपालि है।

इस ग्रन्थ में मङ्गलगाथा को लेकर ३८७ कारिकाएँ हैं, जिनमें मङ्गलगाथा के अन्तर्गत २ गाथाएँ, प्रथम परिच्छेद में ७० गाथाएँ, द्वितीय परिच्छेद में ४३ गाथाएँ, तृतीय परिच्छेद में ७६ गाथाएँ, चतुर्थ परिच्छेद में ११२ गाथाएँ तथा पञ्चम परिच्छेद में ८४ गाथाएँ अथवा कारिकाएँ हैं।

सम्पादन-शैली

ग्रन्थ में आये हुए तकनीकी दार्शनिक शब्दों को भरसक काले अक्षरों में रखा गया है, जिससे अध्येताओं को विशेष रूप से उनकी अभिव्यक्ति हो सके और इन्हें स्पष्ट करने के लिए सम्बन्धित ग्रन्थों से उद्धरण नामोल्लेख तथा

---

१. दि पालि लिट्रेचर आफ सीलोन, पूर्वोक्त, पृ० २०३।

उसकी पृष्ठ-संख्या सहित दे दिए गये हैं, जिससे यदि कोई जिज्ञासु विस्तार से उनके बारे में ज्ञान प्राप्त करना चाहे तो उन ग्रन्थों की सहायता से उसे प्राप्त करने में समर्थ हो सके। ऐसे ग्रन्थों के सङ्केत-विवरण भी अलग स्वतन्त्र रूप से दे दिये गये हैं।

इस ग्रन्थ का सम्पादन दो प्रकाशित ग्रन्थों को आधार बनाकर किया गया है—(१) सन् १९१८ में पालि टेक्स्ट सोसायटी, लन्दन, के जर्नल में प्रकाशित रोमन संस्करण एवं बुद्धसासन समिति, बर्मा, द्वारा सन् १९६३ में बर्मी लिपि में प्रकाशित संस्करण। पाठ की दृष्टि से रोमन संस्करण की अपेक्षा यह बर्मी संस्करण अधिक समीचीन प्रतीत होता है, अतः इसके ही पाठ मूल में अधिक संख्या में विद्यमान हैं तथा रोमन संस्करण के पाठ पाद-टिप्पणियों में। कहीं-कहीं इन दोनों के आधार पर अपना पाठ भी देवनागरी लिपि में इसके प्रथम सम्पादक को बनाना पड़ा है, उदाहरणार्थ गाथा सं० २९६ का पाठ—

''अहीरिकमनोत्तप्प-मोहुद्धच्चा च द्वादसे।
लोभो अट्ठसु चित्तेसु थीनमिद्धं तु पञ्चसु''।।

इन दोनों संस्करणों की पृष्ठ संख्या भी बर्मी लिपि में प्राप्त संस्करण के लिए [B] तथा रोमन संस्करण के लिए [R] के रूप में दे दी गयी है, और पाठभेद को व्यक्त करने के लिए 'रो' रोमन संस्करण तथा 'म' मरम्म अर्थात् बर्मी संस्करण का परिचायक है। ग्रन्थ के अन्त में गाथाओं के प्रथम पाद की अनुक्रमणिका भी प्रस्तुत कर दी गयी है।

इस लघु ग्रन्थ सच्चसङ्खेप का सम्पादक विशेष रूप से दो विद्वान् महानुभावों— श्रमण-विद्या संकायाध्यक्ष **प्रो० डॉ०ब्रह्मदेवनारायणशर्मा** तथा सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के प्रकाशन संस्थान के निदेशक **डॉ० हरिश्चन्द्र मणि त्रिपाठी** के प्रति विशेष आभार एवं कृतज्ञता व्यक्त करता है, क्योंकि इन्हीं की प्रेरणा तथा उत्साहित करने के कारण इसके सम्पादन को वह पूर्ण करने में समर्थ हो सका और अभिधर्मपिटक के बुद्धवचनत्व तथा सच्चसङ्खेप ग्रन्थ के प्रणेता के सन्दर्भ में समालोचनात्मक सामग्री भूमिका में प्रस्तुत कर सका।

आशा है कि पाठभेदों, सम्बद्ध ग्रन्थों से टिप्पणियों एवं आलोचनात्मक विस्तृत भूमिका के साथ देवनागरी लिपि में प्रथम बार प्रकाशित सच्चसङ्खेप ग्रन्थ

का यह संस्करण स्थविरवादी अभिधर्म के अध्येताओं के लिए उपादेय सिद्ध होगा।

बहुत सावधान रहने पर भी किसी ग्रन्थ के सम्पादनादि कार्य में कुछ त्रुटियों के होने की सम्भावना रहती है। अत: विद्वत्समाज इसके लिए सम्पादक को क्षमा प्रदान करने का अनुग्रह अवश्य करेगा।

भवतु सब्बमङ्गलं

लक्ष्मीनारायण तिवारी

सङ्केत-विवरण

अट्ठ०	=	अट्ठसालिनी (धम्मसङ्गणि-अट्ठकथा), भण्डारकर ओरियन्टल सीरिज, पूना, १९४२ ई०।
अनि० २	=	अङ्गुत्तरनिकाय भाग २, नालन्दा संस्करण, १९६० ई०।
अभि०को०भा०का०	=	अभिधर्मकोशभाष्यकारिका, काशी प्रसाद जायसवाल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पटना संस्करण, १९६७ ई०।
अभि०दी०	=	अभिधर्मदीप, विभाषाप्रभावृत्ति सहित, काशी प्रसाद जायसवाल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पटना संस्करण, १९५९ ई०।
अभिधम्मा०	=	अभिधम्मावतार, पालि टेक्स्ट सोसायटी, लन्दन संस्करण, १९१५ ई०।
अभि०स०	=	अभिधम्मत्थसङ्गह, विभाविनीटीका सहित, बौद्ध स्वाध्याय सत्र, वाराणसी संस्करण, १९६५ ई०।
अभि०स०टी०	=	अभिधम्मत्थसङ्गहटीका (पोराणटीका), बर्मी संस्करण, रंगून, १९१०।
उ०	=	उदान, नालन्दा संस्करण, १९५९ ई०।
कथा०अ०	=	कथावत्थुपकरणअट्ठकथा, जर्नल आफ पालि टेक्स्ट सोसायटी, लन्दन, १८८९ ई०।
का०	=	कारिका।
खु०पा०अ०	=	खुद्दकपाठअट्ठकथा, पालि टेक्स्ट सोसायटी, लन्दन संस्करण, १९१५ ई०।
त०	=	तत्थेव, तत्रैव।
त्रिं०	=	त्रिंशिका, सिल्वाँ लेवी द्वारा प्रकाशित, पेरिस, १९२५ ई०।
द०	=	दट्ठब्ब, द्रष्टव्य।

प्रसन्न०	=	प्रसन्नपदा, आचार्य चन्द्रकीर्ति विरचित माध्यमिक-कारिका-वृत्ति सहित, पूँसे द्वारा सम्पादित, बिब्लोथिका बुद्धिका संस्करण १९०३-१९१३ ई०।
बोधि०प०का०	=	बोधिचर्यावतारपञ्जिका बोधिचर्यावतारकारिका पर, मिथिला संस्कृत रिसर्च इन्स्टीट्यूट, दरभंगा संस्करण, १९६० ई०।
म	=	मरम्म संस्करण, सच्चसङ्खेप, बुद्धसासन समिति, बर्मा संस्करण, १९६२ ई०।
म०नि० २	=	मज्झिमनिकाय भाग २, नालन्दा संस्करण, १९५८ ई०।
रो	=	रोमन संस्करण, सच्चसङ्खेप, जर्नल आफ पालि टेक्स्ट सोसायटी, लन्दन द्वारा प्रकाशित, १९१८ ई०।
वि०प्र०वृ०	=	विभाषाप्रभावृत्ति, काशी प्रसाद जायसवाल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पटना संस्करण, १९५९ ई०।
विसु०	=	विसुद्धिमग्ग, भारतीय विद्याभवन, बम्बई संस्करण, १९४० ई०।
सं०नि० ३	=	संयुत्तनिकाय भाग ३, नालन्दा संस्करण, १९५९ ई०।
सु०नि०	=	सुत्तनिपात, नालन्दा संस्करण, १९५९ ई०।
सु०नि०अ० १	=	सुत्तनिपातअट्ठकथा भाग १, पालि टेक्स्ट सोसायटी, लन्दन संस्करण, १९१६ ई०।
[B]	=	सच्चसङ्खेप के मरम्म-संस्करण की पृष्ठ संख्या।
[R]	=	सच्चसङ्खेप के रोमन-संस्करण की पृष्ठ संख्या।

सच्चसङ्खेप की
विषय-सूची

पिट्ठङ्काः

●

चुल्लधम्मपालाचरियविरचितो

सच्चसङ्खेपो

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स

सच्चसङ्खेपो

मङ्गलगाथा

१. [R3,B1] नमस्सित्वा तिलोकग्गं, ञेय्यसागरपारगुं ।
भवाभावकरं[1] धम्मं, गणञ्च गुणसागरं ।।१।।

२. निस्साय पुब्बाचरिय-मतं अत्थाविरोधिनं ।
वक्खामि सच्चसङ्खेपं, हितं कारकयोगिनं ।।२।।

१. रूपसङ्खेपो नाम
पठमो परिच्छेदो

३. **सच्चानि** परमत्थञ्च, सम्मुतिञ्चा[2] ति[3] द्वे तहिं[a] ।
थद्धभावादिना[4] ञेय्यं, सच्चं तं **परमत्थकं** ।।३।।

४. सन्निवेसविसेसादि-ञेय्यं **सम्मुति**[5] तं[6] द्वयं ।
भावसङ्केतसिद्धीनं, तथत्ता सच्चमीरितं ।।४।।

---

१. भवाभवकरं—रो।
२-३. सम्मुति चा ति-रो।
४. थद्धभवादिना-रो।
५-६. सम्मुतितं-रो।

a.द.—"तत्थ वुत्ताभिधम्मत्था चतुधा परमत्थतो ।
चित्तं चेतसिकं रूपं निब्बानमिति सब्बथा" ।।—अभि०स०, पृ० ६;

".....अभिधम्मे वा परमत्थतो सम्मुतिं ठपेत्वा परमत्थसच्छिकट्ठसभावसङ्खातपरमत्थवसेन कुसलादिना खन्धादिना च सब्बथा पि वुत्ता अभिधम्मत्था परमत्थतो चतुधा होन्ति....."
—अभि०स०टी०, पृ०२८६; "द्वे अपि सत्ये—संवृतिसत्यं परमार्थसत्यं च। तयो: किं लक्षणम्?

यत्र भिन्ने न तद्बुद्धिरन्यापोहे धिया च तत् ।
घटाम्बुवत्संवृतिसत् परमार्थसदन्यथा ।।

५. परमत्थो सनिब्बान-पञ्चक्खन्धेत्थ रासितो ।
खन्धत्थो च समासेत्वा, वुत्तोतीतादिभेदनं ।।५।।

६. वेदनादीस्वपेकस्मिं[१], खन्धसद्दो तु रुळ्हिया[२] ।
समुद्दादेकदेसे तु, समुद्दादिरवो यथा ।।६।।

७. तत्थ सीतादिरुप्पत्ता, **रूपं** भ्वापानलानिलं[३] ।
भूतं कठिनदवता-पचनीरणभावकं[४] ।।७।।

८. [B2] चक्खु सोतञ्च घानञ्च[५], जिव्हा कायो पभा रवो ।
गन्धो रसोजा इत्थी च, पुमा वत्थु च जीवितं ।।८।।

९. खं जाति जरता भङ्गो, रूपस्स लहुता तथा ।
मुदुकम्मञ्ञता काय-वचीविञ्ञत्ति[६] **भूतिकं**[७] ।।९।।

१०. चक्खादी[८] दट्ठुकामादि-हेतुकम्मजभूतिका[९] ।
पसादा[१०] रूपसद्दादी[११], चक्खुञाणादिगोचरा ।।१०।।

यस्मिन्नवयवशो भिन्ने न तद्बुद्धिर्भवति तत् संवृतिसत्; तद्यथा— घटः... अतोऽन्यथा परमार्थसत्यम्। तत्र भिन्नेऽपि तद्बुद्धिर्भवत्येव। अन्यधर्मापोहेऽपि बुद्ध्या तत् परमार्थसत्; तद्यथा— रूपम्...''—अभि०को०भा०का० ६:४; ''संवृतिसत् इति संव्यवहारेण सत्, परमार्थसत् इति परमार्थेन सत्, स्वलक्षणेन सदित्यर्थतः...''— स्फुटार्था, पृ० ५२४; वि०प्र०, वृ०, पृ० २६२-२६३; प्रसन्न०, पृ० ४९२-४९४; बोधि०प०का० ९:२;

''दुवे सच्चानि अक्खासि सम्बुद्धो वदतां वरो ।
सम्मुतिं परमत्थञ्च ततियं नूपलब्भति ।।
सङ्केतवचनं सच्चं लोकसम्मुतिकारणं ।
परमत्थवचनं सच्चं धम्मानं तथलक्खणं''।। —कथा०अ०, पृ० ३५।

१. वेदनादीसुपेकस्मिं-म।
२. रूळ्हिया-रो।
३. भवापनलानिलं-रो।
४. कठिणदवता०-रो; कथिनदवता०-म।
५. घणनञ्च-रो।
६-७. कायवचीविञ्ञत्तिभूतिकं-रो।
८. चक्खादि-रो।
९. ०केतुकम्मजभूतिका-रो।
१०-११. पसादरूपसद्दादि-रो।

११.　ओजा हि यापना इत्थि-पुमलिङ्गादिहेतुकं[१]।
भावद्वयं[२] तु कायं व, ब्यापि[३] नो[४] सहवुत्तिकं ।।११।।

१२.　निस्सयं वत्थु धातूनं, द्विन्नं कम्मजपालनं ।
जीवितं उप्पलादीनं, उदकं व ठितिक्खणे ।।१२।।

१३.　खं रूपानं परिच्छेदो, जातिआदित्तयं[५] पन ।
रूपनिब्बत्ति[६] पाको च, भेदो चेव यथाक्कमं[७] ।।१३।।

१४.　लहुतादित्तयं तं हि, रूपानं कमतो सिया ।
अदन्धथद्धता चा पि, कायकम्मानुकूलता ।।१४।।

१५.　अभिक्कमादिजनक-चित्तजस्सानिलस्स हि।
विकारो कायविञ्ञत्ति, रूपत्थम्भादिकारणं ।।१५।।

१६.　वचीभेदकचित्तेन, भूतभूमिविकारता ।
वचीविञ्ञत्तुपादिन्न-घट्टनस्सेव[८] कारणं ।।१६।।

१७. [R4]　रूपमब्याकतं सब्बं, विप्पयुत्तमहेतुकं ।
अनालम्बं परित्तादि, इति **एकविधं** नये ।।१७।।

१८.　अज्झत्तिकानि चक्खादी[९], पञ्चेतेव पसादका ।
वत्थुना वत्थु[१०] तानेव[११], द्वारा विञ्ञत्तिभी[१२] सह ।।१८।।

१९.　सेसं बावीसति[१३] चेक-वीसवीसति बाहिरं ।
अप्पसादमवत्थुञ्च, अद्वारञ्च यथाक्कमं ।।१९।।

२०.　पसादा पञ्च भावायु, इन्द्रियनिन्द्रियेतरं[१४]।
विनापं[१५] आदितो[१६] याव, रसा[१७] थूलं[१८] न चेतरं ।।२०।।

---

१. इत्थी-पुम०-रो।　२. भावद्द्वयं-रो।
३-४. व्यापिनो-रो।　५. जाति आदित्तयं-रो।
६. रूपनिप्फत्ति०-रो।　७. यथक्कमं-रो।
८. वचीविञ्ञत्तुपादिण्ण०-रो।　९. चक्खादि-रो।
१०-११. वत्थुतानेव-रो।　१२. विञ्ञत्तिहि-रो।
१३. बावीसती-रो।　१४. इन्द्रियं निन्द्रियेतरं-रो।
१५-१६. विना पंआदितो-रो।　१७-१८. रसथूलं-रो।

२१. [B3] अट्ठकं अविनिब्भोगं, वण्णगन्धरसोजकं ।
भूतं तं तु विनिब्भोग-मितरं ति विनिद्दिसे ।।२१।।

२२. अट्ठारसादितो रूपा[१], निप्फन्नं तु न चेतरं ।
फोट्ठब्बमापवज्जं[२] तु[३], भूतं कामे[४] न[५] चेतरं ।।२२।।

२३. सेक्खसप्पटिघासेक्ख-पटिघं[६] द्वयवज्जितं[७] ।
वण्णं तदितरं थूलं, सुखुमञ्चेति तं[८] तिधा[९] ।।२३।।

२४. कम्मजाकम्मजं[१०] नेव-कम्माकम्मजतो[११] तिधा ।
चित्तोजउतुजादीनं, वसेना पि तिधा तथा ।।२४।।

२५. दिट्ठं[१२] सुतं[१३] मुतञ्चा पि, विञ्ञातं वत चेतसा ।
एकमेकञ्च पञ्चा पि, वीसति च कमा सियुं ।।२५।।

२६. हदयं वत्थु विञ्ञत्ति, द्वारं चक्खादिपञ्चकं[१४] ।
वत्थु द्वारञ्च सेसानि, वत्थु द्वारञ्च नो सिया ।।२६।।

२७. निप्फन्नं रूपरूपं[१५] खं, परिच्छेदोथ लक्खणं ।
जातिआदित्तयं रूपं, विकारो लहुतादिकं ।।२७।।

२८. यथा[१६] सङ्खातधम्मानं[१७], लक्खणं सङ्खतं तथा ।
परिच्छेदादिकं रूपं, तज्जातिमनतिक्कमा ।।२८।।

२९. कम्मचित्तानलाहार-पच्चयानं[१८] वसेनिध ।
ञेय्या पवत्ति रूपस्स, पिण्डानञ्च वसा[१९] कथं[२०] ।।२९।।

३०. **कम्मजं** सेन्द्रियं वत्थु[२१], विञ्ञत्ति **चित्तजा** रवो[२२] ।
चित्तग्गिजो लहुतादि-त्तयं **चित्तानलन्नजं** ।।३०।।

---

१. रूपं-रो।
२-३. फोट्ठब्बं आपवज्जं तु-रो।
४-५. कामेन-रो।
६-७. पटिघद्द्वयवज्जितं-रो।
८-९. तन्निधा-रो।
१०-११. कम्मजाकम्मजानेव कम्माकम्मजातो-रो।
१२-१३. दिट्ठमसुतं-रो।
१४. चक्खादि पञ्चकं-रो।
१५. रूपारूपं-रो।
१६-१७. यथासङ्खातधम्मानं-रो।
१८. कम्मचित्तनलाहार०-रो।
१९-२०. वसाकथं-रो।
२१-२२. वत्थु-विञ्ञत्ति-चित्तजारवो-रो।

३१.　अट्ठकं जाति चाकासो, **चतुजा** जरता खयं ।
कुतोचि नेव जातं त-प्पाकभेदञ्हि[१] तं द्वयं[२] ।।३१।।

३२.　जातिया पि न[३] जातत्तं[४], कुतोचिट्ठकथानया[५] ।
लक्खणाभावतो तस्सा, सति तस्सिं न निट्ठिति[६] ।।३२।।

३३.　कम्मचित्तानलन्नेहि, **पिण्डा** नव च सत्त च ।
चत्तारो द्वे च विञ्ञेय्या, सजीवे द्वे अजीवके ।।३३।।

३४. [B4]　अट्ठकं जीवितेनायु-नवकं भाववत्थुना ।
चक्खादी[७] पञ्च दसका, कलापा **नव कम्मजा** ।।३४।।

३५. [R5]　सुद्धट्ठविञ्ञत्तियुत्त-नवको[८] दसको पि च[९] ।
सुद्धसद्देन नवको, लहुतादिदसेकको[१०] ।।३५।।

३६.　विञ्ञत्ति लहुतादीहि, पुन द्वादस तेरस ।
चित्तजा इति विञ्ञेय्या, कलापा **सत्त वा छ वा** ।।३६।।

३७.　सुद्धट्ठं सद्दनवकं, लहुतादिदसेककं[११] ।
सद्दे न लहुतादीहि, **चतुरोतुजकण्णिका** ।।३७।।

३८.　सुद्धट्ठलहुतादीहि[१२], **अन्नजा द्वे** तिमे नव ।
सत्त चत्तारि द्वे चेति, **कलापा वीसती द्विभि**[१३] ।।३८।।

३९.　तयट्ठका च चत्तारो, नवका दसका नव ।
तयो द्वेको च एकेन, दस द्वीहि च तीहि च ।।३९।।

४०.　चतुन्नम्पि च धातूनं, अधिकंसवसेनिध ।
रूपभेदोथ विञ्ञेय्यो, कम्मचित्तानलन्नजो ।।४०।।

---

१. त-प्पाकभेदं हि-म।　२. वयं-रो।
३-४. नजातत्तं-रो।　५. कुतोचट्ठ कथानया-रो।
६. निट्ठितं-रो।　७. चक्खादि-रो।
८-९. नवको पि च दसको-म।　१०. लहुतादि दसेकको-रो।
११. लहुतादि दसेककं-रो।　१२. सुद्धट्ठ लहुतादीहि-रो।
१३. द्वीहि-रो।

४१. केसादिमत्थलुङ्गन्ता[1], पठवंसा ति[2] वीसति ।
पित्तादिमुत्तकन्ता ते, जलंसा द्वादसीरिता ।।४१।।

४२. येन सन्तप्पनं[3] येन, जीरणं दहनं तथा ।
येनसीतादिपाको ति, चतुरंसानलाधिका ।।४२।।

४३. उद्धाधोगमकुच्छिट्ठा, कोट्ठासेय्यङ्गसारि च ।
अस्सासो ति च विञ्ञेय्या, छळंसा[4] वायुनिस्सिता[5] ।।४३।।

४४. पुब्बमुत्तकरीसञ्चु-दरियं[6] चतुरोतुजा[7] ।
कम्मा पाचग्गि चित्तम्हा-स्सासो[8] ति छ पि एकजा[9] ।।४४।।

४५. सेदसिङ्घानिकस्सु[10] च, खेळो चित्तोतुसम्भवा ।
द्विजा[11] द्वत्तिंस[12] कोट्ठासा, सेसा एव चतुब्भवा ।।४५।।

४६. एकजेस्वादिचतूसु[13], उतुजा चतुरट्ठका ।
जीवीतनवको[14] पाचे-स्सासे[15] चित्तभवट्ठको ।।४६।।

४७. [B5] द्विजेसु मनतेजेहि, द्वे द्वे होन्ति पनट्ठका ।
सेसतेजानिलंसेसु, एकेकम्हिं तयो तयो ।।४७।।

४८. अट्ठकोजमनग्गीहि[16], होन्ति अट्ठसु कम्मतो ।
अट्ठायुनवका[17] एवं, इमे अट्ठ चतुब्भवा ।।४८।।

४९. चतुवीसेसु सेसेसु, चतुजेस्वट्ठका[18] तयो ।
एकेकम्हि च विञ्ञेय्या, पिण्डा चित्तानलन्नजा ।।४९।।

१-२. ०लुङ्गन्तापठवंसाहि-रो; ०पथवंसा ति-म।
३. सन्तापनं-रो।
४-५. छलंसावायुनिस्सिता-रो।
६. पुब्बमुत्तकरीसञ्चोदरियं-रो।
७. चतुरोतुज-रो।
८. चित्तम्हा सासो-रो।
९. एकज-रो।
१०. ०कास्सु-रो।
११-१२. द्विजाबत्तिंस-रो।
१३. एकजेस्वादि चतुसु-रो।
१४. जीवितनवको-रो।
१५. पाचेसासे-रो।
१६. अट्ठको जमनग्गीहि-रो।
१७. अट्ठायु नवका-रो।
१८. चतुजेसुट्ठका-म।

५०. कम्मजा कायभावव्हा, दसका पि सियुं तहिं ।
चतुवीसेसु अंसेसु, एकेकम्हि दुवे दुवे ।।५०।।

५१. पञ्चा[१] पि चक्खुसोतादी[२], पदेसदसका पुन ।
नवका सद्दसङ्खाता, द्वे तिच्चेवं कलापतो ।।५१।।

५२. तेपञ्ञास[३] दसेकञ्च, नवुत्तरसतानि च ।
दसका नवका चेव, अट्ठका च सियुं कमा ।।५२।।

५३. [R6] सेकपञ्चसतं काये, सहस्सं तं पवत्तति ।
परिपुण्णिन्द्रिये रूपं, निप्फन्नं धातुभेदतो ।।५३।।

५४. चित्तुप्पादे सियुं रूप-हेतू कम्मादयो पन ।
ठिति[४] न[५] **पाठे** चित्तस्स, न भङ्गे रूपसम्भवो ।।५४।।

५५. "अञ्ञथत्तं ठितस्सा" ति, वुत्तत्ता व ठितिक्खणं ।
अत्थी ति चे पबन्धेन, ठिति तत्थ पवुच्चति ।।५५।।

५६. अथ[६] वा तिक्खणे[७] कम्मं, चित्तमत्तुदयक्खणे ।
उतुओजात्तनो[८] ठाने, रूपहेतु भवन्ति[९] हि[१०] ।।५६।।

५७. सेय्यस्सादिक्खणे काय-भाववत्थुवसा[११] तयो ।
दसका होन्तिभाविस्स[१२], विना भावं दुवे सियुं ।।५७।।

५८. [B6] ततो परञ्च कम्मग्गि-चित्तजा[१३] ते[१४] च पिण्डिका ।
अट्ठका च दुवे पुब्बे, वुत्तवुत्तक्खणे वदे ।।५८।।

५९. कालेनाहारजं होति, चक्खादिदसकानि च ।
चतुपच्चयतो रूपं, सम्पिण्डेवं[१५] पवत्तति[१६] ।।५९।।

---

१. पञ्ञा-रो।
२. चक्खुसोतादि-रो।
३. ते पञ्ञास-रो।
४-५. ठितिन्न-रो।
६-७. अथवातिक्खणे-रो।
८. उतु ओजात्तनो-रो।
९-१०. भवन्तिहि-रो।
११. कायभाववत्थु वसा-रो।
१२. होन्त्यभाविस्स-रो।
१३-१४. चित्तजाते-रो।
१५-१६. सम्पिण्डेवम्पवत्तति-रो।

६०. तं सत्तरसचित्तायु[१], विना विञ्ञत्तिलक्खणं[२]।
सन्ततामरणा[३] रूपं, जरादिफलमावहं ।।६०।।

६१. भङ्गा सत्तरसुप्पादे, जायते कम्मजं न तं।
तदुद्धं जायते तस्मा, तक्खया मरणं भवे ।।६१।।

६२. आयुकम्मुभयेसं वा, खयेन मरणं भवे।
उपक्कमेन वा केस-ञ्चुपच्छेदककम्मुना ।।६२।।

६३. ओपपातिकभाविस्स, दसका सत्त कम्मजा।
कामे आदो भवन्तग्गि-जाहि[४] पुब्बेव भूयते ।।६३।।

६४. आदिकप्पनरानञ्च, अपाये अन्धकस्स च।
बधिरस्सा पि आदो छ, पुब्बेवेतरजा सियुं ।।६४।।

६५. तत्थेवन्धबधिरस्स[५], पञ्च होन्ति अभाविनो।
युत्तिया इध विञ्ञेय्या, पञ्च वा चतुरो पि वा ।।६५।।

६६. चक्खादित्तयहीनस्स[६], चतुरो व भवन्ति[७] हि[८]।
वुत्तं[९] उपपरिक्खित्वा[१०], गहेतब्बं विजानता ।।६६।।

६७. रूपे जीवितछक्कञ्च[११], चक्खादिसत्तकत्तयं।
पञ्च छ उतुचित्तेहि, पञ्च[१२] छासञ्ञिनं[१३] भवे ।।६७।।

६८. पञ्चधात्वादिनियमा[१४], **पाठे**[१५] गन्धरसोजनं।
नुप्पत्ति तत्थ भूतानं, अफोट्ठब्बपवत्तिनं[१६] ।।६८।।

६९. थद्धुण्हीरणभावो व[१७], नत्थि धात्वादिकिच्चतो।
अञ्ञं गन्धादिनं[१८] तेसं, तक्किच्चेनोपलद्धितो[१९] ।।६९।।

---

१. सत्तरस चित्तायु-रो।
२. विञ्ञत्ति लक्खणं-रो।
३. सन्तता मरणा-रो।
४. भवन्तग्गिजादि-रो।
५. तत्थेव अन्धबधिरस्स-रो।
६. चक्खादित्तय हीनस्स-रो।
७-८. भवन्ती ति-रो।
९-१०. वुत्तमुपपरिक्खित्वा-रो।
११. जीवितचक्कञ्च-रो।
१२-१३. छ पञ्चासञ्ञिनं-रो।
१४-१५. पञ्चधात्वादिनियमापाठे-रो।
१६. अफोट्ठब्बप्पवत्तिनं-रो।
१७. च-रो।
१८. गन्धादीनं-म।
१९. तक्किच्चे नोपलद्धितो-रो।

७०. रूपे सप्पटिघत्तादि[1], तत्थ रुप्पनतो[2] विय ।
घट्टनञ्च खुप्पाद-स्सञ्ञत्थस्सेव[3] हेतुता ।।७०।।

७१. [R7,B7] इच्छितब्बमिमेकन्त-मेवं पाठाविरोधतो ।
अथ वा तेहि विञ्ञेय्यं, दसकं नवकट्ठकं ।।७१।।

७२. सब्बं कामभवे रूपं, रूपे एकूनवीसति ।
असञ्ञीनं दस गन्ध-रसोजाहि च ब्रह्मुनं[4] ।।७२।।

इति[5] सच्चसङ्खेपे रूपसङ्खेपो नाम
पठमो परिच्छेदो[6]।



१. सप्पटिघट्टादि-रो।
२. रुप्पणता-रो।
३. ०स्सञ्ञथस्सेव-रो।
४. ब्रह्मुणं-रो।
५-६. रूपक्खन्धविभागो नाम पठमो परिच्छेदो-रो।

२. खन्धत्तयसङ्खेपो नाम
दुतियो परिच्छेदो

७३. **वेदनानुभवो**[१] तेधा[२], सुखदुक्खमुपेक्खया ।
इट्ठानिट्ठानुभवन-मज्झानुभवलक्खणा ।।१।।

७४. कायिकं मानसं दुक्खं, सुखोपेक्खा च वेदना ।
एकं मानसमेवेति, पञ्चधिन्द्रियभेदतो ।।२।।

७५. यथा तथा[३] वा[४] सञ्जानं[५], **सञ्जा** सतिनिबनधनं ।
छधा छद्द्वारसम्भूत[६]-फस्सजानं वसेन सा ।।३।।

७६. **सङ्खारा** चेतना फस्सो, मनक्कारायु सण्ठिति ।
तक्को चारो च वायामो, पीति छन्दाधिमोक्खको[७] ।।४।।

७७. सद्धा सति हिरोत्तप्पं, चागो मेत्ता मती[८] पुन[९] ।
मज्झत्तता च पस्सद्धी[१०], कायचित्तवसा दुवे ।।५।।

७८. लहुता[११] मुदुकम्मञ्ञ[१२]-पागुञ्ञमुजुता[१३] तथा ।
दया मुदा[१४] मिच्छावाचा, कम्मन्ताजीवसंवरो ।।६।।

७९. लोभो दोसो च मोहो च, दिट्ठि उद्धच्चमेव च ।
अहिरीकं[१५] अनोत्तप्पं, विचिकिच्छितमेव[१६] च ।।७।।

---

१. वेदनानुभावो-रो।
२. तिधा-रो।
३-४. तथावा-रो।
५. सञ्ञाणं-म।
६. छद्वार०-म।
७. छन्दोधिमोक्खको-म।
८. मति-म।
९. पन-रो।
१०. पस्सद्धि-रो।
११-१२. लहुता-मुदुकम्मञ्ञ-रो।
१३. पागुञ्ञवुजुता-रो।
१४. मुदु-रो।
१५-१६. अहिरिकमनोत्तप्पम्विचिकिच्छितमेव-रो।

८०. [B8] मानो इस्सा च[1] मच्छेरं[2], कुक्कुच्चं थीनमिद्धकं[3]।
इति एतेव[4] पञ्ञास, सङ्खारक्खन्धसञ्ञिता ।।८।।

८१. ब्यापारो चेतना फस्सो, फुसनं सरणं तहिं।
मनक्कारो पालनायु, समाधि अविसारता ।।९।।

८२. आरोपनानुमज्जट्ठा, तक्कचारा[5] पनीहना[6]।
विरियं[7] पीणना पीति, छन्दो तु कत्तुकामता ।।१०।।

८३. अधिमोक्खो निच्छयो सद्धा, पसादो सरणं सति।
हिरी[8] पापजिगुच्छा[9] हि, ओत्तप्पं तस्स[10] भीरुता[11] ।।११।।

८४. अलग्गो च अचण्डिक्कं, चागो मेत्ता मति[12] पन।
याथावबोधो[13] मज्झत्तं, समवाहितलक्खणं[14] ।।१२।।

८५. [R8] छ युगानि कायचित्त-दरगारवथद्धता-[15]।
अकम्मञ्ञत्तगेलञ्ञ-कुटिलानं विनोदना ।।१३।।

८६. तानुद्धतादिथीनादि[16]- दिट्ठादीनं[17] यथाक्कमं।
सेसकादिअसद्धादि-मायादीनं[18] विपक्खिनो ।।१४।।

८७. दुक्खापनयनकामा[19], दया मोदा पमोदना[20]।
वचीदुच्चरितादीनं, विरामो विरतित्तयं ।।१५।।

८८. लोभो दोसो च मोहो च, गेधचण्डमनन्धता।
कमेन दिट्ठि दुग्गाहो, उद्धच्चं[21] भन्ततं[22] मतं ।।१६।।

१-२. मच्छरियं-रो।
३. थिनमिद्धकं-म; सब्बत्थ 'थि' इति।
४. एतानि-रो।
५-६. चक्कचारापनीहना-रो।
७. वीरियं-म; सब्बत्थ 'वी' इति।
८-९. हिरिपापजिगुच्छा-रो।
१०-११. तस्सभीरुता-रो।
१२. मती-रो।
१३. यथावबोधो-रो।
१४. समापादितलक्खणं-रो।
१५. कायचित्तादारगारवथद्धता-रो।
१६-१७. तानुद्धतादि थीनादि दिट्ठादीनं-रो।
१८. सेसागादि असद्धादि मायादीनं-रो।
१९-२०. दया दुक्खापनयना कामा मदो पमदना-रो।
२१-२२. उद्धच्चम्भन्तता-रो।

८९. अहिरीकमलज्जत्तं[1], अनोत्तप्पमतासता[2]।
संसयो विचिकिच्छा हि, मानो उन्नतिलक्खणो ।।१७।।

९०. [B9] परस्सकसम्पत्तीनं[3], उसूया[4] च निगूहना।
इस्सामच्छेरका[5] तापो[6], कताकतस्स[7] सोचना[8] ।।१८।।

९१. थीनं चित्तस्स सङ्कोचो, अकम्मञ्ञतता पन।
मिद्धमिच्चेवमेतेसं, **लक्खणञ्च** नये बुधो ।।१९।।

९२. वेदनादिसमाधन्ता[9], सत्त **सब्बगसञ्ञिता**।
तक्कादिअधिमोक्खन्ता[10], छ **पकिण्णकनामका** ।।२०।।

९३. सद्धादयो विरमन्ता, **अरणा** पञ्चवीसति।
लोभादिमिद्धकन्तानि[11], **सरणानि** चतुद्दस ।।२१।।

९४. इस्सामच्छेरकुक्कुच्च-दोसा[12] कामे दया मुदा।
कामे रूपे च सेसा छ-चत्तालीस[13] तिधातुजा ।।२२।।

९५. छन्दनिच्छयमज्झत्त-मनक्कारा सउद्धवा।
दयादी[14] पञ्च मानादी[15], छ **येवापन**[16] सोळस ।।२३।।

९६. छन्दादी[17] पञ्च **नियता**[18], तत्थेकादस नेतरा।
अहिरीकमनोत्तप्पं[19], लोकनासनकं[20] द्वयं[21] ।।२४।।

९७. एते द्वे मोहुद्धच्चा[22] ति[23], चत्तारो **पापसब्बगा**[24]।
लोकपालदुकं वुत्तं, हिरिओत्तप्पनामकं[25] ।।२५।।

---

१. अहिरिक०-रो।
२. अनोत्तप्पमता सता-रो।
३. परसकसम्पत्तीनं-रो।
४. उसुया-रो।
५-६. इस्सामच्छेरकातापो-रो।
७-८. कतस्साकतसोचना-रो।
९. वेदनादि समाधन्ता-रो।
१०. तक्कादि अधिमोक्खन्ता-रो।
११. लोभादि मिद्धकन्तानि-रो।
१२. इस्सा मच्छेर०-रो।
१३. छचत्ताळीस-रो।
१४. दयादि-रो।
१५. मानादि-रो।
१६. ये वा पन-रो।
१७-१८. छन्दादिपञ्चनियता-रो।
१९. अहिरिकमनोत्तप्पं-रो।
२०-२१. लोकनासनकद्द्वयं-रो।
२२-२३. मोहमुद्धच्चा-रो।
२४. सब्बपापगा-रो।
२५. हिरि ओत्तप्पनामहं-रो।

९८. आरम्मणूपनिज्झाना[१], **झानङ्गा** तक्कचारका ।
पीति एकग्गता चेति, सत्त वित्तित्तयेन वे ।।२६।।

९९. सद्धा सति मतेकग्ग-धिति लोकविनासका ।
पालका नव[२] चेतानि[३], **बलानि** अविकम्पतो ।।२७।।

१००. एत्थ सद्धादिपञ्चायु[४], कत्वात्र[५] चतुधा मतिं ।
वेदनाहि द्विसत्तेते, इन्द्रियानाधिपच्चतो ।।२८।।

१०१. मनरूपिन्द्रियेहेते, सब्बे **इन्द्रिय**नामका ।
बावीसति भवन्तायु-द्वयं[६] कत्वेकसङ्गहं ।।२९।।

१०२. [R9,B10] दिट्ठिहेकग्गतातक्क-सतीविरतियो[७] **पथा** ।
अट्ठ निय्यानतो आदि-चतुरो भित्वान[८] द्वादस ।।३०।।

१०३. फस्सो च चेतना चेव, द्वेवेत्थाहारणत्थतो[९]।
आहारा मनवोजाहि, भवन्ति चतुरोथवा[१०] ।।३१।।

१०४. **हेतु**[११] मूलट्ठतो[१२] पापे, लोभादित्तयमीरितं ।
कुसलाब्याकते चा पि, अलोभादित्तयं तथा ।।३२।।

१०५. दिट्ठिलोभदुसा[१३] कम्म-पथापायस्स मग्गतो ।
तब्बिपक्खा सुगतिया, तयो ति छ पथीरिता ।।३३।।

१०६. पस्सद्धादियुगानि[१४] छ, वग्गत्ता युगळानि[१५] तु ।
उपकारा सति[१६] धी[१७] च, बहूपकारभावतो[१८] ।।३४।।

१०७. **ओघाहरणतो योगा**, योजनेनाभवग्गतो ।
सवनेना**सवा** दिट्ठि-मोहेजेत्थ दुधा लुभो ।।३५।।

---

१. आरम्मणुपनिज्झाना-रो।
२-३. च नवेतानि-रो।
४. सद्धादि पञ्चायु-रो।
५. कत्वात्त्र-रो।
६. भवन्तायुद्द्वयं-रो।
७. दिट्ठि हेकग्गता तक्कसतिविरतियो-रो।
८. भेत्वा-रो।
९. द्वेवेत्थ आहारणत्थतो-रो।
१०. चतुरो थवा-रो।
११-१२. हेतुमूलट्ठतो-रो।
१३. दिट्ठिलोभा दुसा-रो।
१४. पस्सद्धादि युगानि-रो।
१५. युगलानि-रो।
१६-१७. सतिद्धि-रो।
१८. बहूपकार भावतो-रो।

१०८. दळ्हग्गाहेन दिट्ठेजा, **उपादानं** तिधा तहिं ।
दिट्ठिदोसेन ते गन्था, गन्थतो दिट्ठिह[1] द्विधा[2] ।।३६।।

१०९. पञ्चावरणतो काम-कङ्खादोसुद्धवं[3] तपो[4] ।
थीनमिद्धञ्च मोहेन, छ वा **नीवरणानिथ**[5] ।।३७।।

११०. कत्वा तापुद्धवं एकं, थीनमिद्धञ्च वुच्चति ।
किच्चस्साहारतो चेव, विपक्खस्स[6] च लेसतो ।।३८।।

१११. [B11] दिट्ठेजुद्धवदोसन्ध-कङ्खाथीनुन्नती[7] दस ।
लोकनासयुगेनेते, **किलेसा**[8] चित्तक्लेसतो[9] ।।३९।।

११२. लोभदोसमूहमान-दिट्ठिकङ्खिस्समच्छरा[10] ।
संयोजनानि दिट्ठेजा, भित्वा बन्धनतो दुधा ।।४०।।

११३. तानि मोहुद्धवंमान-कङ्खादोसेजदिट्ठियो[11] ।
दुधा दिट्ठि तिधा लोभं[12], भित्वा[13] सुत्ते दसीरिता[14] ।।४१।।

११४. दिट्ठिलोभमूहमान-दोसकङ्खा तहिं दुधा ।
कत्वा लोभमिमे सत्ता-**नुसया**[15] समुदीरिता ।।४२।।

११५. दिट्ठि एव[16] **परामासो**, ञेय्यो एवं समासतो ।
अत्थो सङ्खारक्खन्धस्स, वुत्तो वुत्तानुसारतो ।।४३।।

इति[17] सच्चसङ्खेपे खन्धत्तयसङ्खेपो नाम
दुतियो परिच्छेदो[18]।

●

१-२. दिट्ठिहदिद्धधा-रो।
३-४. कामकङ्खा दसद्धवन्नपो-रो।
५. नीवरणान्यथा-रो।
६. विपक्कस्स-रो।
७. ०कङ्खा थीनुन्नती-रो; ०कङ्खाथिनुण्णती-म।
८. क्लेसा-रो।
९. चित्तकिलेसतो-रो।
१०. ०मच्छेरा-रो।
११. मोहुद्धच्चमानकङ्खा दोसेजदिट्ठियो-रो।
१२-१३. लोभम्भित्वा-रो।
१४. दसेरिता-रो।
१५. सत्तनुसया-रो।
१६. येव-रो।
१७-१८. वेदनादिखन्धत्तयविभागो नाम दुतियो परिच्छेदो-रो।

३. चित्तपवत्तिपरिदीपनो नाम
ततियो परिच्छेदो

११६. [R10] चित्तं विसयग्गाहं तं, पाकापाकदतो दुधा ।
कुसलाकुसलं पुब्बं, परमब्याकतं मतं ।।१।।

११७. कुसलं तत्थ कामादि-भूमितो[१] चतुधा सिया ।
अट्ठ पञ्च च[२] चत्तारि[३], चत्तारि कमतो कथं ।।२।।

११८. सोमनस्समतियुत्त-मसङ्खारमनेककं[४] ।
ससङ्खारमनञ्चेकं, तथा हीनमती[५] द्वयं ।।३।।

११९. तथोपेक्खामतियुत्तं, मतिहीनं[६] ति अट्ठधा ।
कामावचरपुञ्ञेत्थ[७], भिज्जते वेदनादितो ।।४।।

१२०. [B12] दानं सीलञ्च भावना, पत्तिदानानुमोदना ।
वेय्यावच्चापचायञ्च, देसना सुति[८] दिट्ठिजु[९] ।।५।।

१२१. एतेस्वेकमयं हुत्वा, वत्थुं निस्साय वा न[१०] वा[११] ।
द्वारहीनादियोनीनं, गतियादिप्पभेदवा ।।६।।

१२२. तिकालिकपरित्तादि-गोचरेस्वेकमादिय[१२] ।
उदेति कालमुत्तं वा, मतिहीनं[१३] विनामलं[१४] ।।७।।

---

१. कामादि भूमितो-रो।
२-३. चत्तारि च-म।
४. ०मसङ्खारमनमेकं-म।
५. हीनमति-म।
६. मति हीनं-रो।
७. कामावचरपुञ्ञेत्थयेत्थ-रो।
८-९. सुतिदिट्ठुजु-रो।
१०-११. नवा-रो।
१२. तिकालिकपरित्तादि गोचरेस्वेकं आदिया-रो।
१३. मति हीनं-रो।
१४. विना मलं-रो।

१२३. छगोचरेसु[1] रूपादि-पञ्चकं[2] पञ्च[3] गोचरा[4] ।
सेसं[5] रूपमरूपञ्च[6], पञ्ञत्ति छट्ठगोचरा ।।८।।

१२४. ञाणयुत्तवरं तत्थ, दत्वा सन्धिं तिहेतुकं ।
पच्छा पच्चति पाकानं, पवत्ते अट्ठके दुवे ।।९।।

१२५. तेसु येव निहीनं तु, दत्वा सन्धिं दुहेतुकं ।
देति द्वादस पाके च, पवत्ते धीयुतं विना ।।१०।।

१२६. एवं धीहीनमुक्कट्ठं, सन्धियञ्च पवत्तियं ।
हीनं पनुभयत्था पि, हेतुहीनेव पच्चति ।।११।।

१२७. कामसुगतियं येव, भवभोगददं इदं ।
रूपापाये पवत्तेव, पच्चते अनुरूपतो ।।१२।।

१२८. वितक्कचारपीतीहि[7], सुखेकग्गयुतं[8] मनं ।
आदि चारादिपीतादि[9]- सुखादीहि परं तयं ।।१३।।

१२९. उपेक्खेकग्गतायन्त-मारुप्पञ्चेवमङ्गतो[10] ।
पञ्चधा **रूपपुञ्ञं** तु, होतारम्मणतो पन ।।१४।।

१३०. आदिस्सासुभमन्तस्सु-पेक्खा मेत्तादयो तयो ।
आदो चतुन्नं पञ्चन्नं, सस्सासकसिणानि[11] तु ।।१५।।

१३१. नभतम्मनतस्सुञ्ञ-तच्चित्तचतुगोचरे ।
कमेनातिक्कमा**रुप्प-पुञ्ञं** होति चतुब्बिधं ।।१६।।

१३२. [B13] अमलं सन्तिमारब्भ, होति तं **मग्ग**योगतो ।
चतुधा पादकज्झान-भेदतो पुन वीसति ।।१७।।

---

१. छ गोचरेसु-रो।
२. रूपादि पञ्चकं-रो।
३-४. पञ्चगोचरा-रो।
५-६. सेसरूपमरूपञ्च-रो।
७. वितक्काचारपीतीहि-रो।
८. सुखेकग्ग-उतं-रो।
९. चारादि पीतादि-रो।
१०. ०मारुप्पं येवम्येवमङ्गतो-रो।
११. ससासकसिणानि-रो।

१३३. दिट्ठिकङ्खानुदं[१] आदि[२], कामदोसतनूकरं ।
परं परं तदुच्छेदी, अन्तं सेसकनासकं[३] ।।१८।।

१३४. [R11] एवं भूमित्तयं पुञ्ञं, भावनामयमेत्थ हि ।
पठमं वत्थुं निस्साय, दुतियं उभयेन पि ।।१९।।

१३५. ततिये आदि निस्साय, सेसा[४] निस्साय[५] वा न वा ।
होन्ति आदिद्वयं[६] तत्थ, साधेति सकभूभवं ।।२०।।

१३६. साधेतानुत्तरं सन्तिं, अभिञ्ञा, पनिधेव[७] तु ।
झानूदयफलत्ता[८] न, फलदाना[९] पि सम्भवा ।।२१।।

१३७. नाञ्ञभूफलदं कम्मं, रूपपाकस्स गोचरो ।
सकम्मगोचरो येव, न चञ्ञोयमसम्भवो[१०] ।।२२।।

१३८. पापं कामिकमेवेकं, हेतुतो तं द्विधा पुन ।
मूलतो तिविधं लोभ-दोसमोहवसा सिया ।।२३।।

१३९. सोमनस्सकुदिट्ठीहि, युत्तमेकमसङ्खरं[११] ।
ससङ्खारमनञ्चेकं, हीनदिट्ठिद्वयं[१२] तथा ।।२४।।

१४०. उपेक्खादिट्ठियुत्तम्पि[१३], तथा दिट्ठिवियुत्तकं ।
वेदनादिट्ठिआदीहि[१४], **लोभमूलेवमट्ठधा** ।।२५।।

१४१. सदुक्खदोसासङ्खारं, इतरं **दोसमूलकं** ।
मोहमूलम्पि सोपेक्खं, कङ्खुद्धच्चयुतं[१५] द्विधा ।।२६।।

१४२. तत्थ दोसद्वयं वत्थुं[१६], निस्सायेवितरे पन ।
निस्साय वा न[१७] वा[१८] होन्ति, वधादिसहिता कथं ।।२७।।

१-२. दिट्ठि कङ्खमिदमादि-रो।
३. सेसाघनासकं-रो।
४-५. सेसानिस्साय-रो।
६. आदिद्द्वयं-रो।
७. पनिध एव-रो।
८-९. झानोदय फलत्तान-फलदाना-रो।
१०. चञ्ञो यमसम्भवो-रो।
११. उत्तमेकमसङ्खरं-रो।
१२. ०दिट्ठिद्द्वयं-रो।
१३. उपेक्खा दिट्ठि उत्तम्पि-रो।
१४. वेदना दिट्ठि आदीहि-रो।
१५. कङ्खुद्धच्चउतं-रो।
१६. वत्थं-रो।
१७-१८. नवा-रो।

१४३. फरुस्सवचब्यापादा[१], सदोसेन[२] सलोभतो ।
कुदिट्ठिमेथुनाभिज्झा, सेसा कम्मपथा[३] द्विभि[४] ।।२८।।

१४४. [B14] सन्धिं चतूस्वपायेसु[५], देति सब्बत्थ वुत्तियं ।
पच्चते गोचरं तस्स, सकलं[६] अमलं[७] विना ।।२९।।

१४५. अब्याकतं द्विधा पाक-क्रिया तत्थादि भूमितो ।
चतुधा कामपाकेत्थ[८], पुञ्ञपाकादितो दुधा ।।३०।।

१४६. पुञ्ञपाका द्विधाहेतु-सहेतू ति द्विरट्ठका ।
अहेतू[९] पञ्च ञाणानि[१०], गहणं तीरणा[११] उभो ।।३१।।

१४७. कायञाणं सुखी[१२] तत्थ[१३], सोमनस्सादि[१४] तीरणं[१५] ।
सोपेक्खानि[१६] छ सेसानि, सपुञ्ञं व सहेतुकं ।।३२।।

१४८. केवलं सन्धिभवङ्ग-तदालम्बचुतिब्बसा[१७] ।
जायते सेसमेतस्स[१८], पुब्बे वुत्तनया नये ।।३३।।

१४९. मनुस्सविनिपातीनं, सन्धादि अन्ततीरणं ।
होति अञ्ञेन कम्मेन, सहेतू[१९] पि अहेतुनं ।।३४।।

१५०. पापजा पुञ्ञजाहेतु-समा[२०] तीरं[२१] विनादिकं ।
सदुक्खं कायविञ्ञाणं, अनिट्ठारम्मणा इमे ।।३५।।

१५१. ते सातगोचरा तेसु, द्विट्ठानं[२२] आदितीरणं[२३] ।
पञ्चट्ठानापरा द्वे ते, परित्तविसयाखिला[२४] ।।३६।।

१५२. सम्पटिच्छद्विपञ्चन्नं, पञ्च रूपादयो तहिं ।
पच्चुप्पन्ना व सेसानं, पाकानं छ तिकालिका ।।३७।।

१-२. फरुसवधब्बयापादासो दोसेन-रो।
३-४. कम्मपथाति हि-रो।
५. चतुस्वपायेसु-रो।
६-७. सकलममलं-रो।
८. कामपाहेत्थ-रो।
९-१०. अहेतुपञ्चञाणानि-रो।
११. तिरणा-रो।
१२-१३. सुखीलत्थ-रो।
१४-१५. सोमनस्सादितीरणं-रो।
१६. से पेक्खानि-रो।
१७. ०चुतीवसा-रो।
१८. सेसेमे तस्स-रो।
१९. सहेतु-म।
२०-२१. पुञ्ञजा हेतु समातीरं-रो।
२२-२३. द्विठानमादितीरणं-रो।
२४. परित्तविसया खिला-रो।

१५३. [R12] रूपारूपविपाकानं, सब्बसो सदिसं वदे।
सकपुञ्ञेन सन्धादि-सकिच्चत्तयतं[१] विना ।।३८।।

१५४. समानुत्तरपाका पि, सकपुञ्ञेन[२] सब्बसो।
हित्वा मोक्खमुखं तं[३] हि[४], द्विधा मग्गे तिधाफले[५] ।।३९।।

१५५. क्रिया तिधामलाभावा[६], भूमितो[७] तत्थ कामिका।
द्विधा[८] हेतुसहेतू[९] ति, तिधाहेतु[१०] तहिं कथं ।।४०।।

१५६. [B15] आवज्जहसितावज्जा, सोपेक्खसुखुपेक्खवा[११]।
पञ्चछकामावचरा[१२], सकलारम्मणा[१३] च ते ।।४१।।

१५७. सहेतुरूपरूपा[१४] च, सकपञ्ञंवारहतो[१५]।
वुत्तिया न फले पुप्फं, यथा छिन्नलता फलं ।।४२।।

१५८. अनासेवनयावज्ज-द्वयं[१६] पुथुज्जनस्स[१७] हि।
न फले वत्तमानम्पि, मोघपुप्फं फलं यथा ।।४३।।

१५९. तिसत्त द्विछ छत्तिंस, चतुपञ्च[१८] यथाक्कमं।
पुञ्ञं[१९] पापं फलं क्रिया[२०], **एकूननवुतीविधं**[२१] ।।४४।।

१६०. सन्धि[२२] भवङ्गमावज्जं[२३], दस्सनादिकपञ्चकं।
गहतीरणवोट्ठब्ब-जवतग्गोचरं[२४] चुति[२५] ।।४५।।

१६१. इति एसं द्विसत्तन्नं, किच्चवुत्तिवसाधुना।
चित्तप्पवत्ति छद्वारे[२६], सङ्खेपा वुच्चते कथं ।।४६।।

---

१. सन्धादि सककिच्चत्तयं-रो।
२. सकपुञ्ञेहि-रो।
३-४. तञ्हि-रो।
५. तिधफले-रो।
६. तिधा मलाभावा-रो।
७. भुम्मितो-रो।
८-९. द्विधाहेतु-सहेतू-रो।
१०. तिधा हेतु-रो।
११. सोपेक्खा सुखुपेक्खवा-रो।
१२-१३. पञ्च छ कामावचरसकलारम्मणा-रो।
१४. सहेतुरूपारूपा-रो।
१५. सकपुञ्ञं वरहतो-रो।
१६. अनासेवनया वज्जद्द्वयं-रो।
१७. पोथुज्जनस्स-रो।
१८. चतु पञ्च-रो।
१९-२०. पुञ्ञपापफलक्रिया-रो।
२१. एकूननवुतिब्बिधं-रो।
२२-२३. सन्धिभवङ्गमावज्ज-रो।
२४-२५. जवमग्गोचरच्चुति-रो।
२६. छद्द्वारे-रो।

१६२. कामे सरागिनं कम्म-निमित्तादि चुतिक्खणे ।
खायते मनसो येव, सेसानं कम्मगोचरो ।।४७।।

१६३. उपट्ठितं तमारब्भ, पञ्चवारं जवो[1] भवे[2] ।
तदालम्बं ततो तम्हा, चुति होति जवेहि वा ।।४८।।

१६४. अविज्जातण्हासङ्खार-सहजेहि[3] अपायिनं ।
विसयादीनवच्छादि-नमनक्खिपकेहि[4] तु ।।४९।।

१६५. अप्पहीनेहि सेसानं, छादनं नमनम्पि[5] च ।
खिपका पन सङ्खारा, कुसलाव[6] भवन्तिह[7] ।।५०।।

१६६. किच्चत्तये कते एवं, कम्मदीपितगोचरे ।
तज्जं वत्थुं सहुप्पन्नं, निस्साय वा न वा तहिं ।।५१।।

१६७. तज्जा सन्धि सिया हित्वा, अन्तरत्तं भवन्तरे ।
अन्तरत्तं विना दूरे, पटिसन्धि कथं भवे ।।५२।।

१६८. इहेव कम्मतण्हादि-हेतुतो[8] पुब्बचित्तको[9] ।
चित्तं दूरे सिया दीप-पटिघोसादिकं यथा ।।५३।।

१६९. [B16] नासञ्ञा चवमानस्स, निमित्तं न चुती च यं ।
उद्धं सन्धिनिमित्तं किं, पच्चयो पि कनन्तरो[10] ।।५४।।

१७०. पुब्बभवे चुति दानि, कामे जायनसन्धिया ।
अञ्ञचित्तन्तराभावा, होतानन्तरकारणं ।।५५।।

१७१. भवन्तरकतं कम्मं, यमोकासं लभे ततो ।
होति सा सन्धि तेनेव, उपट्ठापितगोचरे ।।५६।।

१७२. [R13] यस्मा चित्तविरागत्तं, कातुं नासक्खि सब्बसो ।
तस्मा सानुसयस्सेव, पुनुप्पत्ति सिया भवे ।।५७।।

१-२. जवोभवे-रो।
३. अविज्जा तण्हा सङ्खारसहजेहि-रो।
४. विसयादि नवच्छादन मनक्खिपकेहि-रो।
५. न मनम्पि-रो।
६-७. कुसलावभवन्तिह-रो।
८. कम्मतण्हादि हेतुतो-रो।
९. पुब्बचित्ततो-रो।
१०. क्वनन्तरो-रो।

१७३. पञ्चद्वारे सिया सन्धि, विना कम्मं द्विगोचरे ।
भवसन्धानतो सन्धि, भवङ्गं तं तदङ्गतो ।।५८।।

१७४. तमेवन्ते चुति[१] तस्मिं, गोचरे चवनेन[२] तु ।
एकसन्ततिया एवं, उप्पत्तिट्ठितिभेदका ।।५९।।

१७५. अथञ्ञारम्मणापाथ-गते[३] चित्तनन्तरस्स हि ।
हेतुसङ्ख्यं भवङ्गस्स, द्विक्खत्तुं चलनं भवे ।।६०।।

१७६. घट्टिते अञ्ञवत्थुम्हि, अञ्ञनिस्सितकम्पनं[४] ।
एकाबद्धेन होती ति, सक्खरोपमता[५] वदे ।।६१।।

१७७. मनोधातुक्रियावज्जं, ततो होति सकिं भवे[६] ।
दस्सनादि सकद्वार-गोचरो[७] गहणं ततो ।।६२।।

१७८. सन्तरीणं ततो तम्हा, वोट्ठब्बञ्च सकिं ततो ।
सत्तक्खत्तुं जवो कामे, तम्हा तदनुरूपतो ।।६३।।

१७९. तदालम्बद्विकं तम्हा, भवङ्गतिमहन्तरि[८] ।
जवा महन्ते वोट्ठब्बा, परित्ते[९] नितरे[१०] मनं ।।६४।।

१८०. वोट्ठब्बस्स परित्ते तु, द्वत्तिक्खत्तुं जवो विय ।
वदन्ति वुत्तिं तं[११] **पाठे**[१२] अनासेवनतो न हि ।।६५।।

१८१. नियमो पिध चित्तस्स, कम्मादिनियमो[१३] विय ।
ञेय्यो अम्बोपमादीहि[१४], दस्सेत्वा तं सुदीपये ।।६६।।

१८२. [B17] मनोद्वारेतरावज्जं[१५], भवङ्गम्हा सिया ततो ।
जवो कामे विभूते तु, कामव्हे[१६] विसये ततो ।।६७।।

---

१. चुती-रो।
२. वचनेन-रो।
३. अथञ्ञारम्मणा पाठगते-रो।
४. अञ्ञनिस्सिता कम्पनं-रो।
५. सङ्खारोपमया-रो।
६. ततो-रो।
७. सकद्द्वारगोचरे-रो।
८. भवङ्गन्ति महन्तरि-रो।
९-१०. परित्तेनित्तरे-रो।
११-१२. तम्पाठे-रो।
१३. कम्मादि नियमो-रो।
१४. अम्बोपमादीनि-रो।
१५. मनोद्वारेतरा वज्जं-रो।
१६. कामके-रो।

१८३. कामीनं तु तदालम्बं, भवङ्ग तु ततो सिया ।
अविभूते परित्ते[१] च[२], भवङ्गं जवतो भवे ।।६८।।

१८४. अविभूते विभूते च, परित्ते अपरित्तके[३] ।
जवा येव भवङ्गं तु, ब्रह्मानं चतुगोचरे ।।६९।।

१८५. महग्गतं पनारब्भ, जविते दोससंयुते ।
विरुद्धत्ता भवङ्गं[४] न[५], किं सिया सुखसन्धिनो[६] ।।७०।।

१८६. उपेक्खातीरणं[७] होति, परित्तेनावज्जं[८] कथं ।
नियमो न विनावज्जं[९], मग्गतो फलसम्भवा ।।७१।।

१८७. महग्गतामला[१०] सब्बे, जवा गोत्रभुतो[११] सियुं ।
निरोधा च फलुप्पत्ति, भवङ्गं जवनादितो ।।७२।।

१८८. सहेतुसासवा[१२] पाका, तीरणा द्वे चुपेक्खका ।
इमे सन्धि[१३] भवङ्गा[१४] च, चुति चेकूनवीसति[१५] ।।७३।।

१८९. द्वे द्वे आवज्जनादीनि, गहणन्तानि तीणि तु ।
सन्तीरणानि एकं[१६] व[१७], वोट्ठब्बमिति[१८] नामकं[१९] ।।७४।।

१९०. [R14] अट्ठ[२०] काममहापाका[२१], तीणि सन्तीरणानि च ।
एकादस भवन्तेते, तदारम्मणनामका ।।७५।।

१९१. कुसलाकुसलं सब्बं, क्रिया चावज्जवज्जिता ।
फलानि पञ्चपञ्ञास[२२], जवनानि भवन्तिमे ।।७६।।

इति[२३] सच्चसङ्खेपे चित्तपवत्तिपरिदीपनो नाम
ततियो परिच्छेदो[२४]।

१-२. चापरित्ते-रो।
३. चापरित्तके-रो।
४-५. भवङ्गन्ता-रो।
६. सुखसन्धिते-रो।
७. उपेक्खा तीरणं-रो।
८. परित्ते नावज्जं-रो।
९. विना वज्जं-रो।
१०. महग्गता मला-रो।
११. गोत्रभुतो-रो।
१२. सहेतु सासवा-रो।
१३-१४. सन्धिभवङ्गा-रो।
१५. चेकून वीसति-रो।
१६-१७. एकञ्च-रो।
१८-१९. वोट्ठब्बमितिनामकं-म।
२०-२१. अट्ठकाममहापाका-रो।
२२. पञ्च पञ्ञास-रो।
२३-२४. चित्तप्पवत्तिविभागो नाम ततियो परिच्छेदो-रो।

४. विञ्ञाणक्खन्धपकिण्णकनयसङ्खेपो नाम
चतुत्थो परिच्छेदो

१९२. [B18] एकाधादिनयोदानि, पाटवत्थाय[१] योगिनं ।
वुच्चते विसयग्गाहा, **सब्बमेकविधं** मनं ।।१।।

१९३. एकासीति तिभूमट्ठं, लोकियं सुत्तरञ्च तं ।
सेसं लोकुत्तरं अट्ठ, अनुत्तरञ्चिती[२] **द्विधा**[३] ।।२।।

१९४. लोकपाकक्रियाहेतू[४], चेकहेतू[५] ति सत्तहि ।
तिंस[६] नाधिपति[७] साधि-पति[८] सेसा[९] ति पी द्विधा[१०] ।।३।।

१९५. छन्दचित्तीहवीमंसा[११]- स्वेकेन मतिमा[१२] युतं[१३] ।
विना वीमंसमेकेन, ञाणहीनमनं युतं ।।४।।

१९६. परित्तानप्पमाणानि, महग्गतमनानिति[१४] ।
तिधा छनव[१५] चट्ठ च[१६], तिनवा[१७] च यथाक्कमं ।।५।।

१९७. द्विपञ्च चित्तं विञ्ञाणं, तिस्सो हि मनधातुयो[१८] ।
छसत्तति[१९] मनोञाण-धातू[२०] ति **तिविधा** पुन ।।६।।

---

१. पटुवड्ढाय-म।
२-३. अनुत्तरञ्च इति-दि्द्वधा-रो।
४. लोकपाकक्क्रिया हेतु-रो।
५. चेक हेतू-रो।
६-७. तिंसनाधिपति-रो।
८. साधीपती-रो।
९-१०. सेसानीतिदि्द्वधा-रो।
११. छन्दवित्तिहवीमंसा-रो।
१२-१३. मतिमायुतं-रो।
१४. महग्गतमनानि ति-रो।
१५. छ नव-रो।
१६. चाति-रो।
१७. नवा-रो।
१८. मनोधातुयो-म।
१९. छ सत्तति-रो।
२०. मनो ञाणधातू-रो।

१९८. एकारम्मणचित्तानि, अनभिञ्ञं महग्गतं ।
अमनं पञ्चविञ्ञाणं[१], नवपञ्च[२] भवन्तिमे ।।७।।

१९९. पञ्चालम्बं मनोधातु, साभिञ्ञं कामधातुजं ।
सेसं छारम्मणं तं हि, तेचत्तालीस[३] सङ्ख्यतो ।।८।।

२००. कामपाकदुसा चादि-मग्गो[४] चादिक्रिया दुवे ।
रूपा[५] सब्बेतिरूपे न[६], तेचत्तालीस[७] होन्तिमे ।।९।।

२०१. विना व रूपेनारुप्प-विपाका चतुरो सियुं ।
द्वेचत्तालीस[८] सेसानि, वत्तन्तुभयथा पि च ।।१०।।

२०२. **चतुधा** पि अहेत्वेक-द्विहेतुकतिहेतुतो ।
अट्ठारस[९] द्वे बावीस, सत्तचत्तालिसं भवे[१०] ।।११।।

२०३. [B19] कामे[११] जवा[१२] सवोट्ठब्बा, अभिञ्ञाद्वयमेव[१३] च ।
रूपिरियापथविञ्ञत्ति-करामे[१४] चतुरट्ठका ।।१२।।

२०४. छब्बीसति जवा[१५] सेसा[१६], करा रूपिरियापथे[१७] ।
द्विपञ्चमनवज्जानि[१८], कामरूपफलानि च ।।१३।।

२०५. [R15] आदिक्रिया ति चेकून-वीस[१९] रूपकरा[२०] इमे ।
सेसा चुद्दस भिन्नाव-चुति[२१] सन्धि न तीणि पि ।।१४।।

२०६. एककिच्चादितो **पञ्च-विधा** तत्थेककिच्चका ।
द्विपञ्चचित्तं जवनं, मनोधातुट्ठसट्ठिमे[२२] ।।१५।।

---

१. पञ्च विञ्ञाणं-रो। २. नव पञ्च-रो।
३. तेचत्ताळीस-रो। ४. चादि मग्गो-रो।
५-६. रूपे सब्बेत्त्यरूपेन-रो। ७. तिचत्ताळीस-रो।
८. द्वे चत्ताळीस-रो।
९-१०. अट्ठारसद्द्वेबावीस-सत्त-चत्ताळीस सम्भवे-रो।
११-१२. कामेजवा-रो। १३. अभिञ्ञादद्वयमेव-रो।
१४. रूपियापथ-विञ्ञत्तिकरामे-रो। १५-१६. जव सेसा-रो।
१७. रूपीरियापथे-रो। १८. द्विपञ्च मनवज्जानि-रो।
१९-२०. चेकूनवीसरूपकरा-रो। २१. भिन्नाघचुति-रो।
२२. मनोधात्वट्ठसट्ठिमे-रो।

२०७. द्विकिच्चादीनि वोट्ठब्बं, सुखतीरं महग्गते ।
पाका काममहापाका, सेसा तीरा यथाक्कमं ।।१६।।

२०८. दस्सनं सवनं दिट्ठं, सुतं घायनकादिकं ।
तयं मुतं मनोधातु-त्तयं दिट्ठं सुतं मुतं ।।१७।।

२०९. दिट्ठं सुतं मुतं ञातं, साभिञ्ञं सेसकामिकं[1] ।
विञ्ञातारम्मणं सेस-मेवं **छब्बिधमीरये** ।।१८।।

२१०. **सत्तधा** सत्तविञ्ञाण-धातूनं तु वसा भवे ।
वुच्चतेदानि[2] तस्सेव, अनन्तरनयक्कमो ।।१९।।

२११. पुञ्ञेस्वादिद्वया[3] कामे, रूपपुञ्ञमनन्तकं ।
तप्पादकुत्तरानन्तं, भवङ्गञ्चादितीरणं ।।२०।।

२१२. दुतियन्तद्वया[4] तीरं, भवङ्गं ततियद्वया[5] ।
ते अनन्तामलं[6] पुञ्ञं, मज्झत्तञ्च महग्गतं ।।२१।।

२१३. सब्बवारे सयञ्चेति, तेपञ्ञास तिसत्त च ।
तेत्तिंस[7] च भवन्तेते, रूपेसु पन पुञ्ञतो ।।२२।।

२१४. तप्पाका च मतियुत्त-कामपाका सयं दस ।
आरुप्पपुञ्ञतो ते च, सको पाको सयं पुन ।।२३।।

२१५. अधोपाका[8] च अन्तम्हा, ततियञ्च फलन्तिमे ।
दसेकद्वितिपञ्चाहि[9], मग्गा चेकं सकं फलं ।।२४।।

२१६. [B20] लोभमूलेकहेतूहि, अन्तकामसुभा विय ।
सत्त[10] दोसद्वया[11] काम-भवङ्गुपेक्खवा[12] सयं ।।२५।।

---

१. सेसकामिनं-रो।
२. वुच्चते दानि-रो।
३. पुञ्ञेस्वादिद्द्वया-रो।
४. दुतियन्तद्द्वया-रो।
५. ततियद्द्वया-रो।
६. चानन्तामलं-रो।
७. तेत्तिंसा-रो।
८. अधो पाको-रो।
९. ०पञ्चहि-रो।
१०-११. सत्तदोसद्द्वया-रो।
१२. ०पेक्खना-रो।

२१७. महापाककतिहेतूहि, सावज्जा सब्बसन्धियो ।
कामच्चुतीहि[1] सेसाहि, सावज्जा कामसन्धियो ।।२६।।

२१८. कामच्चुति[2] च वोट्ठब्बं, सयञ्च सुखतीरतो ।
पटिच्छा[3] तीरणानि द्वे[4], इतरा सकतीरणं ।।२७।।

२१९. सकं सकं पटिच्छं तु, विञ्ञाणेहि द्विपञ्चहि ।
रूपपाकेहि सावज्जा, सन्धियोहेतुवज्जिता[5] ।।२८।।

२२०. अरूपपाकेस्वादिम्हा, कामपाका तिहेतुका ।
अन्तावज्जम्पि चारुप्प-पाका च नव होन्तिमे ।।२९।।

२२१. दुतियादीहि ते येव, अधोपाकं विना विना ।
फला तिहेतुका पाका, सयञ्चेति चतुद्दस ।।३०।।

२२२. द्विपञ्चादिक्रिया[6] हासा, सयञ्चारुप्पवज्जिता ।
ञाणयुत्तभवङ्गा ति, दस वोट्ठब्बतो पन ।।३१।।

२२३. [R16] कामे जवा भवङ्गा च, कामरूपे सयम्पि वा ।
नवपञ्च[7] सहेतादि-किरियद्वयतो[8] पन ।।३२।।

२२४. सयं भवङ्गमतिमा, रूपे सातक्रिया[9] पि च ।
तप्पादकन्तिमञ्चेति[10], बावीस ततिया पन ।।३३।।

२२५. ते च पाका सयञ्चन्ते[11], फलं[12] मज्झा महग्गता ।
क्रिया ति वीसति होन्ति, सेसद्वीहि दुकेहि तु ।।३४।।

२२६. वुत्तपाका सयञ्चेति, चुद्दसेवं क्रियाजवा[13] ।
तदारम्मणं[14] मुञ्चित्वा,[15] पट्ठाननयतो नये ।।३५।।

---

१. कामचुतीहि-रो।
२. कामचुति-रो।
३-४. पटिच्छा-तीरणानिद्द्वे-रो।
५. सन्धियो हेतुवज्जिता-रो।
६. द्विपञ्चादि क्रिया-रो।
७-८. नव पञ्च सहेत्वादि किरियाद्वयतो-रो।
९. सातक्रिया-रो; एवमग्गे पि।
१०. तप्पादकं तिमञ्चेति-रो।
११-१२. पाकासञ्चन्तेफलं-रो।
१३. क्रिया जवा-रो।
१४-१५. तदालम्बं विमुञ्चित्वा-रो।

२२७. अथ सातक्रिया सातं, सेसं सेसक्रिया पि च।
तदालम्बं यथायोगं, वदे अट्ठकथानया ।।३६।।

२२८. महग्गता क्रिया सब्बा, सकपुञ्ञसमा तहिं।
अन्ता फलन्तिमं होति, अयमेव विसेसता[1] ।।३७।।

२२९. [B21] इमस्सानन्तरं धम्मा, एत्तका ति पकासिता।
इमं पनेत्तकेही ति, वुच्चतेयं नयोधुना[2] ।।३८।।

२३०. द्वीहि कामजवा तीहि, रूपारूपा चतूहि च।
मग्गा छहि फलादि[3] द्वे[4], सेसा द्वे पन सत्तहि ।।३९।।

२३१. एकम्हा दस पञ्चहि, पटिच्छा सुखतीरणं।
कामे दोसक्रियाहीन-जवेहि[5] गहतो सका ।।४०।।

२३२. कामे जवा क्रियाहीना, तदालम्बा सवोट्ठब्बा।
सगहञ्चेति तेत्तिसं-चित्तेहि[6] परतीरणा[7] ।।४१।।

२३३. कामपुञ्ञसुखीतीर-कण्हवोट्ठब्बतो द्वयं।
महापाकन्तिमं होति, अनारुप्पचुतीहि च ।।४२।।

२३४. सत्ततिसं पनेतानि, एत्थ हित्वा दुसद्वयं[8]।
एतेहि पञ्चतिंसेहि, जायते दुतियद्वयं[9] ।।४३।।

२३५. सुखतीरादि सत्तेते, क्रियतो चा पि सम्भवा।
ञेय्या सेसानि चत्तारि, भवङ्गेन च लब्भरे ।।४४।।

२३६. मग्गवज्जा सवोट्ठब्ब[10]- सुखितीरजवाखिला[11]।
चुती ति नवकट्ठाहि[12], ततियद्वयमादिसे ।।४५।।

---

१. विसेसका-रो।
२. मयोधुना-रो।
३-४. फलादिद्द्वे-रो।
५. दोसक्क्रिया०-रो।
६. तेत्तिंस चित्तेहि-रो।
७. तीरणापरं-रो।
८. दुसद्द्वयं-रो।
९. दुतियद्द्वयं-रो।
१०-११. सवोट्ठब्बा सुखीतीरजवा खिला-रो।
१२. नवकट्ठहि-रो।

२३७. एतेहि दोसवज्जेहि, सत्ततीहितरद्वयं[१] ।
रूपपाका विनारुप्प[२]-पाकाहेतुदुहेतुके[३] ।।४६।।

२३८. तेहेवेकूनसट्ठीहि, होन्तिरुप्पादिकं[४] विना ।
हासावज्जे जवे रूपे, अट्ठछक्केहि[५] तेहि तु ।।४७।।

२३९. साधोपाकेहि तेहेव, दुतियादीनि अत्तना ।
अधोधोजवहीनेहि, एकेकूनेहि जायरे ।।४८।।

२४०. सुखीतीरभवङ्गानि, सयञ्चा ति तिसत्तहि ।
अन्तावज्जं अनारुप्प-भवङ्गेहि पनेतरं ।।४९।।

२४१. वुत्तानन्तरसङ्खातो, नयो दानि अनेकधा ।
पुग्गलादिप्पभेदा पि, पवत्ति तस्स वुच्चते ।।५०।।

२४२.[R17,B22] पुथुज्जनस्स जायन्ते, दिट्ठिकङ्खायुतानि वे ।
सेक्खस्सेवामला[६] सत्त, अनन्तानितरस्स तु ।।५१।।

२४३. अन्तामलं अनावज्ज-क्रिया चेकूनवीसति ।
कुसलाकुसला सेसा, होन्ति सेक्खपुथुज्जने ।।५२।।

२४४. इतरानि पनावज्ज-द्वयं[७] पाका च सासवा ।
तिण्णन्नम्पि सियुं एवं, पच्चधा सत्तभेदतो ।।५३।।

२४५. कामे सोळस घानादि-त्तयं[८] दोसमहाफला ।
रूपारूपे सपाको[९] ति, पञ्चवीसति एकजा ।।५४।।

२४६. कामपाका च[१०] सेसादि-मग्गो[११] आदिक्रिया[१२] दुवे ।
रूपे जवा ति बावीस[१३], द्विजा[१४] सेसा तिधातुजा ।।५५।।

---

१. सत्ततीहितरद्द्वयं-रो।
२-३. विनारुप्पपाका हेतु दुहेतुके-रो।
४. होन्त्यारुप्पादिकं-रो।
५. अट्ठ छक्केहि-रो।
६. सेक्खस्सेव मला-रो।
७. पनावज्ज द्वयं-रो।
८. घाणादित्तयं-रो।
९. सपाका-रो।
१०. व-रो।
११-१२. सेसादि मग्गो चादि क्रिया-रो।
१३-१४. बावीसद्विजा-रो।

२४७. वित्थारो पि च भूमीसु[१], ञेय्यो कामसुभासुभं ।
हासवज्जमहेतुञ्च, अपाये सत्ततिंसिमे ।।५६।।

२४८. हित्वा महग्गते पाके, असीति सेसकामिसु ।
चक्खुसोतमनोधातु, तीरणं[२] वोट्ठब्बम्पि[३] च ।।५७।।

२४९. दोसहीनजवा सो सो, पाको रूपे अनारिये[४] ।
पञ्चसट्ठि छसट्ठी[५] तु, परित्ताभादिसु[६] तीसु ।।५८।।

२५०. आदिपञ्चामला कङ्खा-दिट्ठियुत्ते[७] विना तहिं ।
ते येव पञ्चपञ्ञास[८], जायरे सुद्धभूमीसु[९] ।।५९।।

२५१. आदिमग्गदुसाहास[१०]- रूपहीनजवा सको ।
पाको वोट्ठब्बनञ्चा[११] ति, तिचत्तालीसं[१२] सियुं नभे ।।६०।।

२५२. अधोधोमनवज्जा[१३] ते, पाको चेव सको सको ।
दुतियादीसु जायन्ते, द्वे द्वे ऊना ततो ततो ।।६१।।

२५३. अरूपेस्वेकमेकस्मिं रूपेस्वादित्तिके पि च ।
तिके च ततिये एकं, द्वे होन्ति दुतियत्तिके ।।६२।।

२५४. [B23] अन्तिमं रूपपाकं तु, छसु वेहप्फलादिसु ।
कामसुगतियं येव, महापाका[१४] पवत्तरे ।।६३।।

२५५. घायनादित्तयं[१५] कामे, पटिघद्वयमेव[१६] च ।
सत्तरसेसु पठमं, अमलं मानवादिसु ।।६४।।

२५६. अरियापायवज्जेसु, चतुरादिप्फलादिका[१७] ।
अपायारुप्पवज्जेसु[१८], हासरूपसुभक्रियं[१९] ।।६५।।

---

१. भुम्मीसु-रो।
२-३. तीरवोट्ठपनम्पि-रो।
४. अनरिये-रो।
५. छसट्ठि-रो।
६. परित्ताभादीसु-म।
७. कङ्खा दिट्ठियुत्ते-रो।
८. पञ्च पञ्ञास-रो।
९. सुद्धिभुम्मिसु-रो।
१०. आदिमग्गदुसहास-रो।
११. वोट्ठपनञ्चा-रो।
१२. तिताळीसा-रो।
१३. अधोधो मनवज्जा-रो।
१४. महा पाका-रो।
१५. खाणादिकत्तयं-रो।
१६. पटिघद्द्वयमेव-रो।
१७. चतुरोदिप्फलादिका-म।
१८. अपायरुप्प०-रो।
१९. हासरूपसुभक्रिया-रो।

२५७. अपायुद्धत्तयं हित्वा, होताकाससुभक्रियं[१] ।
तथापायुद्धद्वे[२] हित्वा, विञ्ञाणकुसलक्रियं[३] ।।६६।।

२५८. भवग्गापायवज्जेसु, आकिञ्चञ्ञसुभक्रियं[४] ।
दिट्ठिकङ्खायुता सुद्धे, विना सब्बासु भूमिसु ।।६७।।

२५९. अमलानि च तीणन्ते, भवग्गे च सुभक्रिया[५] ।
महाक्रिया[६] च होन्तेते, तेरसेवानपायिसु ।।६८।।

२६०. [R18] अनारुप्पे मनोधातु, दस्सनं[७] सवतीरणं[८] ।
कामे अनिट्ठसंयोगे[९], ब्रह्मानं[१०] पापजं फलं ।।६९।।

२६१. वोट्ठब्बं कामपुञ्ञञ्च, दिट्ठिहीनं[११] सउद्धवं ।
चुद्दसेतानि चित्तानि, जायरे तिंसभूमिसु[१२] ।।७०।।

२६२. इन्द्रियानि दुवे अन्त-द्वयवज्जेस्वहेतुसु ।
तीणि कङ्खेतराहेतु[१३], पापे चत्तारि तेरस ।।७१।।

२६३. छ ञाणहीने तब्बन्त-सासवे[१४] सत्त[१५] निम्मले[१६] ।
चत्तालीसे[१७] पनट्ठेवं, ञेय्यमिन्द्रियभेदतो[१८] ।।७२।।

२६४. द्वे बलानि अहेत्वन्त-द्वये[१९] तीणि तु संसये ।
चत्तारितरपापे[२०] छ, होन्ति सेसदुहेतुके[२१] ।।७३।।

२६५. एकूनासीतिचित्तेसु[२२], मतियुत्तेसु सत्त तु ।
अबलानि हि सेसानि, विरियन्तं[२३] बलं भवे ।।७४।।

---

१. ०सुभक्क्रियं-रो।
२. तथापायुद्ध द्वे-रो।
३. ०कुसलक्क्रियं-रो।
४. ०सुभक्क्रियं-रो।
५. सुभक्क्रिया-रो।
६. महा क्रिया-रो।
७-८. दस्सनस्स व तीरणं-रो।
९. अनिट्ठ संयोगे-रो।
१०. ब्रह्माणं-रो।
११. दिट्ठि हीनं-रो।
१२. तिंस भुम्मिसु-रो।
१३. कङ्खेतरा हेतु-रो।
१४. तब्बन्त सासवे-रो।
१५-१६. सत्तनिम्मले-रो।
१७. चत्ताळीस-रो।
१८. ञेय्यामिन्द्रियभेदतो-रो।
१९. अहेत्वन्त द्वये-रो।
२०. चत्तारीतर पापे-रो।
२१. सेस दुहेतुके-रो।
२२. एकूनासीति चित्तेसु-रो।
२३. वीरियन्तं-म; सब्बत्थ 'वी' इति।

२६६. [B24] अझानङ्गानि द्वेपञ्च[1], तक्कन्ता हि तदङ्गता ।
झाने पीतिविरत्ते त-प्पादके अमले[2] दुवे ।।७५।।

२६७. ततिये सामले तीणि, चत्तारि दुतिये तथा ।
कामे निप्पीतिके चा पि, पञ्चङ्गानि हि सेसके ।।७६।।

२६८. मग्गा द्वे संसये दिट्ठि-हीनसेसासुभे[3] तयो ।
दुहेतुकेतरे सुद्ध-ज्झाने[4] च दुतियादिके ।।७७।।

२६९. चत्तारो पञ्च पठम-झानकामतिहेतुके[5] ।
सत्तामले दुतियादि-झानिके[6] अट्ठ सेसके ।।७८।।

२७०. हेत्वन्ततो हि मग्गस्स, अमग्गङ्गमहेतुकं ।
छ मग्गङ्गयुतं नत्थि, बलेहि पि च पञ्चहि ।।७९।।

२७१. सुखितीरतदालम्बं[7], इट्ठे पुञ्ञजुपेक्खवा[8] ।
इट्ठमज्झेतरं होति, तब्बिपक्खे तु गोचरे ।।८०।।

२७२. दोसद्वया[9] तदालम्बं, न सुखिक्रियतो[10] पन ।
सब्बं सुभासुभे नट्ठे, तदारम्मणवाचतो[11] ।।८१।।

२७३. क्रियतो वा तदालम्बं, सोपेक्खाय[12] सुखी न हि ।
इतरा इतरञ्चेति, इदं सुट्ठुपलक्खये[13] ।।८२।।

२७४. सन्धिदायककम्मेन, तदालम्बपवत्तियं[14] ।
नियामनं जवस्साहु[15], कम्मस्सेवञ्ञकम्मतो ।।८३।।

२७५. चित्ते चेतसिका यस्मिं, ये वुत्ता ते समासतो ।
वुच्चरे दानि द्वेपञ्च[16], सब्बगा सत्त जायरे ।।८४।।

---

१. द्वे पञ्च-रो।
२. चामले-रो।
३. दिट्ठिहीनसेसा सुभे-रो।
४. सुद्धझाने-रो।
५. पठमज्झानका मतिहेतुके-रो।
६. दुतियादि झानिके-रो।
७. सुखीतीर तदालम्बं-रो।
८. पुञ्ञुजुपेक्खवा-रो।
९. दोसद्द्वया-रो।
१०. सुखी क्रियतो-रो।
११. तदालम्बणवाचतो-म।
१२. सो पेक्खाय-रो।
१३. सुट्ठु फलक्खये-रो।
१४. तदालम्बप्पवत्तियं-रो।
१५. जवस्साह-म।
१६. द्वे पञ्च-रो; द्वेपञ्चे-म।

२७६. तक्कचाराधिमोक्खेहि, ते येव जायरे दस ।
पञ्चट्ठानमनोधातु, पञ्चके सुखतीरणे ।।८५।।

२७७. एते पीताधिका हासे, वायामेन च द्वाधिका ।
वोट्ठब्बने पि एतेव, दसेका पीतिवज्जिता ।।८६।।

२७८.[R19,B25] पापसाधारणा ते च, तिपञ्चुद्धच्चसञ्ञुते ।
कङ्खायुत्ते पि एतेव, सकङ्खा हीननिच्छया ।।८७।।

२७९. कङ्खावज्जा[१] पनेतेव[२], सदोसच्छन्दनिच्छया ।
सत्तरस दुसे होन्ति, सलोभन्तद्वये[३] पन ।।८८।।

२८०. दोसवज्जा सलोभा ते, ततियादिदुकेसु[४] ते ।
दिट्ठिपीतिद्वयाधिका[५], द्विनवेकूनवीसति[६] ।।८९।।

२८१. पीतिचारप्पनावज्जा, आदितो याव तिंसिमे ।
उप्पज्जन्ति चतुत्थादि-रूपारूपमनेसु[७] वे ।।९०।।

२८२. पीतिचारवितक्केसु, एकेन द्वितितिक्कमा[८] ।
ततियादीसु[९] ते येव, तिंसेकद्वेतयोधिका ।।९१।।

२८३. एतेवादिद्वये[१०] कामे, दुतियादिदुकेसु[११] हि ।
मतिं[१२] पीतिं मतिप्पीतिं[१३], हित्वा ते कमतो सियुं ।।९२।।

२८४. झाने वुत्ता व तज्झानि-कामले विरताधिका ।
तत्थेता[१४] नियता वित्तिं[१५], वदे[१६] सब्बत्थ सम्भवा ।।९३।।

१-२. कङ्खावज्जापनेतेव-रो।
३. सलोभन्तद्द्वये-रो।
४. ततियादि दुकेसु-रो।
५. दिट्ठि पीतिद्द्वयाधिका-रो।
६. द्विन्नमेकूनवीसति-रो।
७. चतुत्थादि रूपारूपमनेसु-रो।
८. द्वीतीहि कमा-रो।
९. ततियादिसु-रो।
१०. एतेवादिद्द्वये-रो।
११. दुतियादि दुकेसु-रो।
१२-१३. मति पीति मति पीति-रो।
१४. एत्थेता-रो।
१५-१६. वित्तिवदे-रो।

२८५. कामपुञ्ञेसु पच्चेकं, जयन्तानियतेसु[१] हि ।
विरतीयो[२] दयामोदा, कामे सातसुभक्रिये[३] ।।९४।।

२८६. मज्झत्ते पि वदन्तेके, सहेतुकसुभक्रिये[४] ।
सुखज्झाने पि पच्चेकं, होन्ति येव दयामुदा[५] ।।९५।।

२८७. थीनमिद्धं[६] ससङ्खारे, दिट्ठिहीनद्वये[७] तहिं ।
मानेन वा तयो सेस-दिट्ठिहीने विधेकको ।।९६।।

२८८. [B26] इस्सामच्छेरकुक्कुच्चा, विसुं दोसयुतद्वये[८] ।
तत्थन्तके सियुं थीन-मिद्धकेन तयो पि वा ।।९७।।

२८९. ये वुत्ता एत्तका एत्थ, इति चेतसिकाखिला[९] ।
तत्थेत्तकेस्विदन्तेवं, वुच्चतेयं नयोधुना ।।९८।।

२९०. तेसट्ठिया सुखं दुक्खं, तीसुपेक्खा[१०] पि वेदना ।
पञ्चपञ्ञासचित्तेसु[११], भवे इन्द्रियतो पन ।।९९।।

२९१. एकत्थेकत्थ चेव[१२] द्वे-सट्ठिया[१३] द्वीसु[१४] पञ्चहि[१५] ।
पञ्ञासाया ति विञ्ञेय्यं, सुखादिन्द्रियपञ्चकं[१६] ।।१००।।

२९२. दसुत्तरसते होति, निच्छयो विरियं ततो ।
पञ्चहीने[१७] ततोकूने, समाधिन्द्रियमादिसे ।।१०१।।

२९३. छन्दो एकसतेकून-वीस[१८] सद्धादयो पन ।
ञाणवज्जा नवहीन-सते[१९] होन्ति मती पन ।।१०२।।

---

१. जायन्तानियतेसु-रो।
२. विरतियो-रो।
३. सातसुभक्रिया-रो।
४. ०सुभक्रिये-रो।
५. दया मुदा-रो।
६. थिनमिद्धं-म; सब्बत्थ 'थि' इति।
७. दिट्ठि हीनद्द्वये-रो।
८. दोसयुतद्द्वये-रो।
९. चेतसिका खिला-रो।
१०. तीसु पेक्खा-रो।
११. पञ्चपञ्ञास चित्तेसु-रो।
१२-१३. चेव-द्वेसट्ठिया-रो।
१४-१५. द्वीसुपञ्चहि-रो।
१६. सुख-इन्द्रियपञ्चकं-रो।
१७. पञ्च हीने-रो।
१८. एकरतेकूनवीस-रो।
१९. नव हीन-सते-रो।

२९४. एकूनासीतिया[1] चारो[2], छसट्ठीसु पनप्पना[3] ।
पञ्चपञ्ञासके पीति, एकपञ्ञासके सिया ।।१०३।।

२९५. विरती[4] छट्ठके वीसे, करुणामुदिताथ[5] वा[6] ।
अट्ठसोपेक्खचित्तेन[7], अट्ठवीसतिया सियुं ।।१०४।।

२९६. [R20] अहीरिकमनोत्तप्प-मोहुद्धच्चा[8] च द्वादसे[9] ।
लोभो अट्ठसु चित्तेसु, थीनमिद्धं तु पञ्चसु ।।१०५।।

२९७. मानो चतूसु[10] दिट्ठी[11] च, तथा द्वीसु मनेसु हि ।
दोसो इस्सा च मच्छेरं, कुक्कुच्चञ्च भवन्तिमे ।।१०६।।

२९८. एकस्मिं विमती होति, एवं वुत्तानुसारतो ।
अप्पवत्तिनयो चा पि, सक्का ञातुं विजानता ।।१०७।।

२९९. अस्मिं खन्धे व[12] विञ्ञेय्यो, वेदनादीस्वयं नयो ।
एकधादिविधो[13] युत्ति-वसा तेनावियोगतो ।।१०८।।

३००. उपमा फेणपिण्डो[14] च, बुब्बुलो[15] मिगतण्हिका ।
कदली माया विञ्ञेय्या, खन्धानं तु यथाक्कमं[16] ।।१०९।।

३०१. [B27] तेसं[17] विमद्दासहन-खणसोभप्पलोभन[18]-।
निस्सारवञ्चकत्तेहि[19], समानत्तं समाहटं ।।११०।।

१-२. एकूनासीतियाचारो-रो।
३. पनप्पणा-रो।
४. विरति-रो।
५-६. ०मुदिताथवा-रो।
७. अट्ठ सोपेक्खचित्तेन-रो।
८-९. ०मोहुद्धच्चा द्वादसेव-म; अहिरिकमनोत्तप्पं मोहुद्धञ्च द्वादसे-रो।
१०. चतुसु-रो।
११. दिट्ठि-म।
१२. च-रो।
१३. एकधादिविधि-रो।
१४. फेणुपिण्डो-म।
१५. बुब्बुळो-म।
१६. यथाकमं-रो।
१७-१८. तेसं विमद्दसहन-खणसोभपलम्भना-रो।
१९. निस्सारवञ्च कट्ठेहि-रो।

३०२. ते सासवा उपादान-क्खन्धा खन्धावनासवा ।
तत्थादी[1] दुक्खवत्थुत्ता[2], दुक्खा[3] भारा[4] च खादका ।।१११।।

३०३. खन्धानिच्चादिधम्मा ते, वधका सभया इती[5] ।
असुखद्धम्मतो चिक्खा, उक्खित्तासिकरी यथा ।।११२।।

इति[6] सच्चसङ्खेपे विञ्ञाणखन्धपकिण्णकनयसङ्खेपो नाम
चतुत्थो परिच्छेदो[7]।

१-२. तत्थादिदुक्खवत्थुत्ता-रो। ३-४. दुक्खाभारा-रो।
५. इति-रो।
६-७. पकिण्णकसङ्गहविभागो नाम चतुत्थो परिच्छेदो-रो।

५. निब्बानपञ्ञत्तिपरिदीपनो नाम पञ्चमो परिच्छेदो

३०४. रागादीनं खयं वुत्तं, निब्बानं सन्तिलक्खणं।
संसारदुक्खसन्ताप-तत्तस्सालं समेतवे[a] ।।१।।

३०५. खयमत्तं न निब्बानं, सगम्भीरादिवाचतो[b]।
अभावस्स हि कुम्मानं, लोमस्सेव न वाचता ।।२।।

३०६. खयो ति वुच्चते मग्गो, तप्पापत्ता इदं खयं।
अरहत्तं वियुप्पाद-वयाभावा धुवञ्च तं ।।३।।

---

a. "निब्बानं निब्बानं ति, आवुसो सारिपुत्त, वुच्चति; कतमं नु खो आवुसो निब्बानं ति? यो खो आवुसो रागक्खयो दोसक्खयो मोहक्खयो— इदं वुच्चति निब्बानं ति..."—सं०नि० ३, पृ०२२३,२३३; "तस्मा तथागतो सब्बमञ्ञितानं सब्बमथितानं सब्बअहङ्कारममङ्कार-मानानुसयानं खया विरागा निरोधा चागा पटिनिस्सग्गा अनुपादा विमुत्तो ति वदामी ति..."— म०नि० २, पृ० १७९-१८२; "अत्थि, भिक्खवे, तदायतनं यत्थ नेव पठवी न आपो न तेजो न वायो न आकासानञ्चायतनं न विञ्ञाणञ्चायतनं न आकिञ्चञ्ञायतनं न नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं नायं लोको न परलोको न उभो चन्दिमसुरिया। तत्रापाहं, भिक्खवे, नेव आगतिं वदामि, न गतिं न ठितिं न चुतिं न उपपत्तिं; अप्पतिट्ठं अनारम्मणमेवेतं। एसेवन्तो दुक्खस्सा ति"— उ०, पृ० १६२; "छन्दरागविनोदनं निब्बानपदमच्चुतं"—सु०नि०, पृ० ४३२; "यावता, भिक्खवे, धम्मा सङ्खता वा असङ्खता वा विरागो तेसं धम्मानं अग्गमक्खायति, यदिदं मदनिम्मदनो पिपासविनयो आलयसमुग्घातो वट्टुपच्छेदो तण्हक्खयो विरागो निरोधो निब्बानं"— अ०नि० २, पृ० ३७; "नत्थि एत्थ तण्हासङ्खातं वानं, निग्गतं वा तस्मा वाना ति निब्बानं"—अट्ठ०, पृ० ३२२; "...यस्मा पनेस चतस्सो योनियो, पञ्च गतियो, सत्त विञ्ञाणट्ठितियो, नव च सत्तावासे अपरापरभावाय विननतो, आबन्धनतो, संसिब्बनतो वानं ति लद्धवोहाराय तण्हाय निक्खन्तो, निस्सटो, विसंयुत्तो, तस्मा निब्बानं ति वुच्चती ति"— विसु०, पृ० १९८-१९९; पृ० ३५४-३५६; खु०पा०अ०, पृ० १५७; सु०नि०अ० १, पृ० २५३; अभिधम्मा० ११ परि०; अभि०स०, पृ० १२४-१२५; प्रसन्न०, पृ० ५१९-५२१; त्रिं०, ३० का०; अभि०दी०, १६२ का०; वि०प्र०वृ०, पृ०१२६।

b. अभिधम्मा०, पृ० ८०-८१।

३०७. सङ्खतं सम्मुतिञ्चा पि ञाणमालम्ब[१]नेव[२] हि ।
छिन्ने मले ततो वत्थु[३], इच्छितब्बमसङ्खतं[४] ।।४।।

३०८. पत्तुकामेन तं सन्तिं, छब्बिसुद्धिं[५] समादिय[६] ।
ञाणदस्सनसुद्धी तु, साधेतब्बा[७] हितत्थिना ।।५।।

३०९. चेतनादिविधा[८] **सील-सुद्धि** तत्थ चतुब्बिधा ।
सोपचारसमाधी[९] तु, **चित्तसुद्धी** ति वुच्चते ।।६।।

३१०. [R21] सम्पादेत्वादिद्वेसुद्धिं[१०], नमना नामं तु रुप्पतो[११] ।
रूपं[१२] नत्थि इहत्तादि-वत्थू ति पि[१३] ववत्थपे ।।७।।

३११. [B28] मणिन्धनातपे[१४] अग्गि, असन्तो पि समागमे ।
यथा होति तथा चित्तं, वत्थालम्बादिसङ्गमे[१५] ।।८।।

३१२. पङ्गुलन्धा यथा गन्तुं, पच्चेकमसमत्थका ।
यन्ति[१६] युत्ता[१७] यथा एवं, नामरूपव्हया[१८] क्रिया[१९] ।।९।।

३१३. न नामरूपतो अञ्ञो, अत्तादि इति दस्सनं ।
सोधनत्ता[२०] हि दुद्दिट्ठिं[२१], **दिट्ठिसुद्धी**[a] ति वुच्चति ।।१०।।

३१४. अविज्जातण्हुपादान-कम्मेनादिम्हि[२२] तं द्वयं ।
रूपं कम्मादितो नामं, वत्थादीहि पवत्तियं ।।११।।

३१५. सदा सब्बत्थ सब्बेसं, सदिसं न यतो ततो ।
नाहेतु नाञ्ञो अत्तादि-निच्चहेतू[२३] ति पस्सति ।।१२।।

१-२. ञाणमालम्बनेव-रो। ३-४. वत्थुस्मिच्छितब्बं असङ्खतं-रो।
५. छब्बीसुद्धिं-रो। ६. समापिय-रो।
७. भावेतब्बा-रो। ८. चेतना दिविधा-रो।
९. सो पवारसमाधी-रो।
१०-११. सम्पादेत्वादि द्वे सुद्धिं०-रो; ०नमना नामं तु रुप्प-म।
१२-१३. तो रूपं नत्थि अत्तादि-वत्थू ति च-म।
१४. मनिन्धानातपे-रो। १५. वत्थालम्वादि सङ्गमे-रो।
१६-१७. यन्तियुत्ता-रो। १८-१९. नामरूपव्हयक्रिया-रो।
२०-२१. दुद्दिट्ठि सोधनत्ता हि-रो। २२. अविज्जा तण्हुपादानकम्मेनादिं हि-रो।
२३. अत्तादि निच्चहेतू-रो।
a. विसु०, पृ० ४१५।

३१६.　एवं तीरयते कङ्खा, याय पञ्ञाय पच्चये ।
दिट्ठता सुद्धि सा **कङ्खा-तरणं**[१a] ति[२] पवुच्चति[३] ।।१३।।

३१७.　पत्तञ्ञातपरिञ्ञो[४] सो, अत्रट्ठो यतते यति ।
तीरणव्हपरिञ्ञाय, विसुद्धत्थं सदादरो ।।१४।।

३१८.　तिकालादिवसा खन्धे, समासेत्वा कलापतो ।
अनिच्चा[५] दुक्खानत्तादि[६], आदो एवं विपस्सति ।।१५।।

३१९.　खन्धानिच्चा[७] खयट्ठेन, भयट्ठेन दुखा[८] व[९] ते ।
अनत्तासारकट्ठेन, इति पस्से पुनप्पुनं ।।१६।।

३२०.　आकारेहि अनिच्चादि-चत्तालीसेहि[१०] सम्मसे ।
लक्खणानं विभूतत्थं, खन्धानं पन सब्बसो ।।१७।।

३२१.　एवञ्चा पि असिज्झन्ते, नवधा निस्सितिन्द्रियो[११] ।
सत्तकद्वयतो[१२] सम्मा, रूपारूपे विपस्सये ।।१८।।

३२२.　रूपमादाननिक्खेपा[१३], वयोवुद्धत्तगामितो[१४] ।
सम्मसेवन्नजादीहि, धम्मतारूपतो पि च ।।१९।।

३२३.　नामं कलापयमतो, खणतो कमतो पि च ।
दिट्ठिमाननिकन्तीनं, पस्से उग्घाटनादितो ।।२०।।

३२४. [B29]　अविज्जातण्हाकम्मन्न-हेतुतो रूपमुब्भवे ।
विनाहारं सफस्सेहि, वेदनादित्तयं भवे ।।२१।।

३२५.　तेहि येव विना फस्सं, नामरूपाधिकेहि तु ।
चित्तं हेतुक्खया सो सो, वेति वे तस्स तस्स तु ।।२२।।

---

१. कङ्खा तरणं-रो।　२-३. इति वुच्चति-म।
४. पत्तञातपरिञ्ञो-रो।　५-६. अनिच्चदुक्खानत्तादि-रो।
७. खन्धनिच्चा-रो।　८-९. दुक्खा च-रो।
१०. अनिच्चादि चत्ताळीसेहि-रो।　११. निसितिन्द्रियो-म।
१२. सत्तकद्द्वयतो-रो।　१३-१४. निक्खेपवयोवुद्धत्थगामितो-रो।
a. विसु०, पृ० ४२३।

३२६. हेतुतोदयनासेवं, खणोदयवयेन पि ।
इति पञ्ञासाकारेहि, पस्से पुनुदयब्बयं[१] ।।२३।।

३२७. योगिस्सेवं समारद्ध-उदयब्बयदस्सिनो[२] ।
पातुभोन्ति[३] उपक्लेसा[४], सभावाहेतुतो पि च ।।२४।।

३२८. [R22] ते ओभासमतुस्साह-पस्सद्धिसुखुपेक्खना[५] ।
सति[६] पीताधिमोक्खो[७] च, निकन्ति च दसीरिता ।।२५।।

३२९. तण्हादिट्ठुन्नतिग्गाह-वत्थुतो तिंसधा च[८] ते[९] ।
तदुप्पन्ने चले बालो, अमग्गे मग्गदस्सको ।।२६।।

३३०. विपस्सना पथोक्कन्ता, तदासि मतिमाधुना ।
न मग्गो गाहवत्थुत्ता, तेसं[१०] इति[११] विपस्सति ।।२७।।

३३१. उपक्लेसे अनिच्चादि-वसगे[१२] सोदयब्बये[१३] ।
पस्सतो वीथिनोक्कन्त-दस्सनं[१४] वुच्चते पथो ।।२८।।

३३२. मग्गामग्गे ववत्थेत्वा, या पञ्ञा एवमुट्ठिता ।
मग्गामग्गिक्खसङ्खाता[a], सुद्धी सा पञ्चमी भवे ।।२९।।

३३३. पहानव्हपरिञ्ञायं[१५], आदितो सुद्धिसिद्धिया ।
तीरणव्हपरिञ्ञाय, अन्तगो यततेधुना ।।३०।।

३३४. जायते नवञाणी[१६] सा, विसुद्धि कमतोदय[१७]-।
ब्बयादी[१८] घटमानस्स[१९], नव होन्ति पनेत्थ हि ।।३१।।

---

१. पुनुदब्बयं-रो।
२. समारद्धस्सुदयब्बयदस्सिनो-रो।
३. पातु होन्ति-रो।
४. उपक्क्लेसा-रो; एवमग्गे पि 'क्क्लेस' इति।
५. ०पस्सद्धि सुखुपेक्खना-रो।
६-७. सतिपीताधिमोक्खो-रो।
८-९. ते च-म।
१०-११. तेसमिति-रो।
१२-१३. अनिच्चादि वसगेसोदयब्बये-रो।
१४. वीथिनोक्कन्त दस्सनं-रो।
१५. पहाणव्हपरीञ्ञाय-रो।
१६. नवञानी-रो।
१७. कमतोदयब्-रो।
१८-१९. बयादिघटमानस्स-रो।
a. विसु०, पृ० ४२९।

३३५. सन्ततीरियतो चेव, घनेना[१] पि[२] च छन्नतो ।
लक्खणानि न खायन्ते, सङ्किलिट्ठा विपस्सना ।।३२।।

३३६. [B30] ततोत्र[३] **सम्मसे** भिय्यो[४], पुनदे**वुदयब्बयं**[a] ।
तेनानिच्चादिसम्पस्सं[५], पटुतं[६] परमं वजे ।।३३।।

३३७. आवट्टेत्वा यदुप्पाद-ट्ठितिआदीहि पस्सतो ।
भङ्गेव तिट्ठते ञाणं, तदा **भङ्गमती**[b] सिया ।।३४।।

३३८. एवं पस्सयतो[७] भङ्गं, तिभवो खायते यदा[८] ।
सीहादि व भयं हुत्वा, सिया लद्धा **भयिक्खणा**[c] ।।३५।।

३३९. सादीनवा पतिट्ठन्ते[९], खन्धादित्तघरं विय ।
यदा तदा सिया लद्धा, **आदीनवा**नुपस्सना[d] ।।३६।।

३४०. सङ्खारादीनवं दिस्वा, रमते न भवादिसु ।
मति[१०] यदा[११] तदा लद्धा, सिया **निब्बिद**पस्सना[१२ e] ।।३७।।

३४१. ञाणं मुञ्चितुकामं[१३] ते, सब्बभूसङ्खते[१४] यदा ।
जलादीहिं च मच्छादी[१५], तदा लद्धा **चज्जमति**[१६ f] ।।३८।।

३४२. सङ्खारे असुभानिच्च-दुक्खतोनत्ततो[१७] मति ।
पस्सन्ति चतुमुस्सुका[१८], **पटिसङ्खा**नुपस्सना[g] ।।३९।।

१-२. यं घणेन-रो।
३. ततोत्त-रो।
४. भीय्यो-रो।
५. तेनानिच्चादि सम्पस्सं-रो।
६. पतुतं-रो।
७. हि पस्सतो-रो।
८. तदा-रो।
९. पट्ठहन्ते-रो।
१०-११. यदा मति-रो।
१२. निब्बिन्दपस्सना-रो।
१३. मुच्चितुकामं-रो।
१४. सब्बभू सङ्खते-रो।
१५. मच्छादि-रो।
१६. चजी मती-रो।
१७. ०दुक्खतानत्ततो-रो।
१८. चत्तुमुस्सुका-रो।
a. विसु०, पृ० ४५३।
b. त०, पृ० ४५४-४५५।
c. त०, पृ० ४५७।
d. त०, पृ० ४५९।
e. त०, पृ० ४६१।
f. त०।
g. त०, पृ० ४६३।

३४३. वुत्तात्र[१] पटुभावाय,[२] सब्बञाणपवत्तिया[३]।
मीनसञ्ञाय[४] सप्पस्स[५], गाहलुद्दसमोपमा[६]।।४०।।

३४४. अत्तत्तनियतो सुञ्ञं, द्विधा "नाहं क्वचा"दिना।
चतुधा छब्बिधा चा पि, बहुधा पस्सतो भुसं[a]।।४१।।

३४५. आवट्टतिग्गिमासज्ज[७], न्हारू[८] व मति[९] सङ्कुतं[१०]।
चत्तभरियो यथा[११] दोसे[१२], तथा तं समुपेक्खते।।४२।।

३४६. [R23] ताव सादीनवानम्पि, लक्खणे तिट्ठते मती।
न पस्से याव सा तीरं, सामुद्दसकुणी यथा।।४३।।

३४७. **सङ्खारुपेक्खाञाणायं**,[१३][b] सिखापत्ता विपस्सना[c]।
वुट्ठानगामिनी[१४] चेति[१५], **सानुलोमा**[d] ति वुच्चति।।४४।।

३४८. [B31] पत्वा मोक्खमुखं सत्त, साधेतिरियपुग्गले[१६]।
झानङ्गादिप्पभेदे च, पादकादिवसेन सा[e]।।४५।।

३४९. अनिच्चतो हि वुट्ठानं, यदि यस्सासि योगिनो।
सोधिमोक्खस्स बाहुल्ला, तिक्खसद्धिन्द्रियो भवे[f]।।४६।।

३५०. दुक्खतोनत्ततो तञ्चे, सिया होन्ति[१७] कमेन ते।
पस्सद्धिवेदबाहुल्ला[१८], तिक्खेकग्गमतिन्द्रिया[g]।।४७।।

---

१. वुत्तत्र-रो।
२. पातुभावाय-रो।
३. ०ञाणप्पवत्तिया-रो।
४. मिनसञ्ञाय-रो।
५-६. सप्पस्सगाहलुद्दसमोपमा-रो।
७. आवट्टत्यग्गिमासज्ज-रो।
८. नहारू-रो।
९-१०. मतिसङ्कुतं-रो।
११-१२. यथादोसे-रो।
१३. सङ्खारुपेक्खा ञाणायं-रो।
१४-१५. वुट्ठानगामिनीति च-म।
१६. साधेतारियपुग्गले-रो।
१७. येसं-रो।
१८. पस्सद्धि वेदबाहुल्ला-रो।
a. विसु०, पृ० ४६३-४६४।
b. त०, पृ० ४६५।
c. त०, पृ० ४६८।
d. त०, पृ० ४७५।
e. त०, पृ० ४६६।
f. त०।
g. त०।

३५१. पञ्ञाधुरत्तमुद्दिट्ठं[१], वुट्ठानं यदिनत्ततो ।
सद्धाधुरत्तं[२] सेसेहि, तं वियाभिनिवेसतो ।।४८।।

३५२. द्वे तिक्खसद्धसमता[३], सियुं सद्धानुसारिनो ।
आदो मज्झेसु ठानेसु, छसु सद्धाविमुत्तका[a] ।।४९।।

३५३. इतरो धम्मानुसारीदो[४], दिट्ठिप्पत्तो[५] अनन्तके[६] ।
पञ्ञामुत्तोभयत्थन्ते[७], अझानिझानिका[८] च ते[b] ।।५०।।

३५४. तिक्खसद्धस्स चन्ते पि, सद्धामुत्ततमीरितं ।
विसुद्धिमग्गे मज्झस्स, कायसक्खित्तमट्ठसु[c] ।।५१।।

३५५. वुत्तं मोक्खकथायं यं, तिक्खपञ्ञारहस्स तु ।
दिट्ठिपत्तत्तं[९] हेतञ्च[१०], तञ्च नत्थाभिधम्मिके[११d] ।।५२।।

३५६. ते सब्बे अट्ठमोक्खानं[१२], लाभी[१३] मज्झेसु चे छसु[१४] ।
कायसक्खी सियुं अन्ते, उभतोभागमुत्तका[१५e] ।।५३।।

३५७. अनुलोमानि चत्तारि, तीणि द्वे वा भवन्ति हि ।
मग्गस्स वीथियं मन्द-मज्झतिक्खमतिब्बसा[१६f] ।।५४।।

३५८. **विसुद्धिमग्गे** चत्तारि, पटिसिद्धानि सब्बथा[g] ।
एवमट्ठसालिनिया[१७h], वुत्तता एवमीरितं ।।५५।।

---

१. पञ्ञा धुरत्तमुद्दिट्ठं-रो।
२. सद्धा धुरत्तं-रो।
३. तिक्खसद्धा समथा-रो।
४-५. धम्मानुसारदो दिट्ठिपत्तो-रो।
६. अनन्तको-रो।
७. पञ्ञा मुत्तो॰-रो।
८. झानिका झानिका-रो।
९-१०. दिट्ठिप्पत्तत्तमेतञ्च-रो।
११. नत्थाभिधम्मके-रो।
१२. अट्ठ मोक्खानं-रो।
१३-१४. लाभी चे छसु मज्झसु-म।
१५. उभतो भागमुत्तका-रो।
१६. ॰तिक्खमतीवसा-रो।
१७. अट्ठसालिनिया एवं-रो।
a. विसु॰, पृ॰ ४६७।
b. त॰।
c. त॰।
d. त॰।
e. त॰।
f. त॰, पृ॰ ४७५।
g. त॰, पृ॰ ४६७।
h. अट्ठ॰, पृ॰ ३०६।

३५९. भवङ्गासन्नदोसो पि, नप्पनाय[१] थिरत्ततो ।
सुद्धिं **पटिपदाञाण-दस्सनेवं** लभे यति[२a] ।।५६।।

३६०. [B32] आवज्जं विय मग्गस्स, छट्ठसत्तमसुद्धिनं ।
अन्तरा[३] सन्तिमारब्भ[४], तेहि गोत्रभु जायते ।।५७।।

३६१. सञ्ञोजनत्तयच्छेदी[५], **मग्गो** उप्पज्जते ततो ।
फलानि एकं द्वे तीणि, ततो वुत्तमतिक्कमा[६b] ।।५८।।

३६२. तथा[७] भावयती[८] होति, रागदोसतनूकरं ।
दुतियो तप्फलं तम्हा, **सकदागामि** तप्फलो[c] ।।५९।।

३६३. एवं भावयतो राग-दोसनासकरुब्भवे ।
ततियो तप्फलं तम्हा, तप्फलट्ठो**नागामिको**[d] ।।६०।।

३६४. एवं भावयतो सेस-दोसनासकरुब्भवे ।
चतुत्थो तप्फलं तम्हा, **अरहा** तप्फलट्ठको[९e] ।।६१।।

३६५. [R24] कतकिच्चो भवच्छेदो, दक्खिणेय्योपधिक्खया ।
निब्बुतिं याति दीपो व[१०], सब्बदुक्खन्तसञ्ञितं ।।६२।।

३६६. एवं सिद्धा सिया **सुद्धि**[११], **ञाणदस्सन**सञ्ञिता[१२f] ।
वुत्तं एतावता सच्चं, परमत्थं समासतो ।।६३।।

३६७. सच्चं सम्मुति सत्तादि-अवत्थु[१३] वुच्चते यतो ।
न लब्भालातचक्कं व, तं हि रूपादयो विना ।।६४।।

---

१. नप्पणाय-रो। २. सति-रो।
३-४. अन्तरासन्तिमारब्भ-रो। ५. संयोजन०-रो।
६. वुत्तमतिक्कमो-रो। ७-८. तथाभावयतो-रो।
९. तप्फलट्ठितो-रो। १०. च-रो।
११-१२. सुद्धिञाणदस्सन०-रो। १३. सत्तादि अवत्थु-रो।
a. विसु०, पृ० ४७७। b. त०, पृ० ४७९।
c. त०, पृ० ४८०। d. त०।
e. त०, पृ० ४८१। f. त०।

३६८. तेन तेन पकारेन, रूपादिं[१] न विहाय तु।
तथा तथाभिधानञ्च, गाहञ्च वत्तते ततो ॥६५॥

३६९. लब्भते परिकप्पेन, यतो तं न मुसा ततो।
अवुत्तालम्बमिच्चाहु, परित्तादीस्ववाचतो[२] ॥६६॥

३७०. पापकल्याणमित्तोयं, सत्तो ति खन्धसन्तति[३]।
एकत्तेन[४] गहेत्वान, वोहरन्तीध पण्डिता ॥६७॥

३७१. पठवादि[५] वियेको पि, पुग्गलो न यतो ततो।
कुदिट्ठिवत्थुभावेन[६], पुग्गलग्गहणं भवे ॥६८॥

३७२. एतं विसयतो कत्वा, सङ्खादीहि पदेहि तु।
अविज्जमानपञ्ञत्ति, इति तञ्ञूहि भासिता[७][a] ॥६९॥

३७३. [B33] पञ्ञत्ति विज्जमानस्स, रूपादिविसयत्ततो[८]।
कायं पञ्ञत्ति चे सुट्ठु, वदतो सुण[९] सच्चतो[१०] ॥७०॥

३७४. सविञ्ञत्तिविकारो[११] हि, सद्दो सच्चद्वयस्स[१२] तु।
पञ्ञापनत्ता पञ्ञत्ति, इति तञ्ञूहि भासिता[b] ॥७१॥

३७५. पच्चुप्पन्नादिआलम्बं[१३], निरुत्तिपटिसम्भिदा[१४]।
ञाणस्सा ति इदञ्चेवं, सति युज्जति नाञ्ञथा ॥७२॥

३७६. सद्दाभिधेय्यसङ्खादि[१५], इति चे सब्बवत्थुनं।
पञ्ञापेतब्बतो होति **पञ्ञत्ति**पदसङ्गहो[१६][c] ॥७३॥

---

१. रूपादि-रो।
२. परित्तादीसु वाचतो-रो।
३. खन्धसन्ततिं-रो।
४. एकन्तेन-रो।
५. पथवादि-म।
६. कदिट्ठि०-रो।
७. भासितो-रो।
८. रूपादि विसयत्ततो-रो।
९-१०. सुणतच्छतो-रो।
११. सविञ्ञत्ति विकारो-रो।
१२. सच्चदद्वयस्स-रो।
१३-१४. पच्चुप्पन्नादि आलम्बं निरुत्तिपटिसम्भिदा-रो।
१५. सद्दाभिधेय्यं सङ्खादि-रो।
१६. पञ्ञत्ति पदसङ्गहो-रो।
a. द०-अभि०स०, पृ० २३३।
b. द०-त०, पृ० २३१।
c. द०-त०।

३७७. "सब्बे पञ्ञत्तिधम्मा" ति[१], देसेतब्बं[२] तथा सति ।
अथ पञ्ञापनस्सा पि, पञ्ञापेतब्बवत्थुनं ।।७४।।

३७८. विभागं[३] ञापनत्थं[४] हि, तथुद्देसो कतो ति चे ।
न कत्तब्बं विसुं तेन, पञ्ञत्तिपथसङ्गहं ।।७५।।

३७९. पञ्ञापियत्ता चतूहि, पञ्ञत्तादिपदेहि सा[a] ।
परेहि पञ्ञापनत्ता, इति आचरियाब्रवुं ।।७६।।

३८०. रूपादयो उपादाय, पञ्ञापेतब्बतो किर ।
अविज्जमानोपादाय-पञ्ञत्ति[५] पठमा[६] ततो[b] ।।७७।।

३८१. सोतविञ्ञाणसन्ताना-नन्तरं पत्तजातिना ।
गहितपुब्बसङ्केत-मनोद्वारिकचेतसा ।।७८।।

३८२. पञ्ञापेन्ति गहिताय, याय सत्तरथादयो[७c] ।
इति सा नामपञ्ञत्ति[८], दुतिया ति च कित्तिता ।।७९।।

३८३. [R25] सद्दतो अञ्ञनामाव-बोधनत्थावबोधनं ।
किच्छसाधनतो पुब्ब-नयो एवं पसंसियो ।।८०।।

३८४. सा[९] विज्जमानपञ्ञत्ति[१०], तथा अविज्जमानता[११] ।
विज्जमानेन चाविज्ज-माना[१२] तब्बिपरीतका ।।८१।।

३८५. अविज्जमानेन[१३] विज्ज-मानतब्बिपरीतका[१४] ।
इच्चेता छब्बिधा तासु, पठमा मतिआदिका ।।८२।।

३८६. [B34] सत्तो सद्धो नरुस्साहो, सेनियो मनचेतना ।
इच्चेवमेता[१५] विञ्ञेय्या, कमतो दुतियादिका[d] ।।८३।।

१-२. तिदेसेतब्बं-रो। ३-४. विभागञापणत्थं-रो।
५. ०मानोपादाय पञ्ञत्ति-रो। ६. पथमा-रो।
७. सत्त रथादयो-रो। ८. नाम पञ्ञत्ति-रो।
९-१०. साविज्जमानपञ्ञत्ति-रो। ११. अविज्जमानका-रो।
१२. वा विज्जमाना-रो। १३-१४. अविज्जमानेनाविज्जमाना तब्बिपरीतका-रो।
१५. इच्चेमेता-रो।
a-b. द०-अभि०स०, पृ० २३२-२३४। c-d. द०-त०, पृ० २३१-२३४।

३८७. एवं लक्खणतो ञत्वा, सच्चद्वयमसङ्करं[१] ।
कातब्बो पन वोहारो, विञ्ञूहि न यथा तथा।। ति ।८४।।

इति[२] सच्चसङ्खेपे निब्बानपञ्ञत्तिपरिदीपनो नाम
पञ्चमो परिच्छेदो।

सच्चसङ्खेपो निट्ठितो[३] ।



१. सच्चदद्वयमसङ्करं-रो।

२-३. निब्बानविभागादीहि सङ्गहितो नाम पञ्चमो परिच्छेदो।
निट्ठितो सच्चसङ्खेपो।
सुखी होतु।

इति बदरतित्थमहाविहारवासिना तिपिटकपरियत्तिधरेन सद्धासीलादिगुणगणाभरण-विभूसितेन अट्ठकथाचरिय-टीकाचरिय-अनुटीकाचरिय-धुरन्धरेन भदन्तधम्मपालाभिधान-महासामि-पदेन विरचितं सच्चसङ्खेपपकरणं निट्ठितं-रो।

सच्चसङ्खेपस्स
गाथानं आदिपदवसेन
अनुक्कमणिका[1]

---
[1] एत्थ गाथानं आदि-संख्या दिन्ना अत्थि।



सुसंग्रहणीय अभिनव-प्रकाशन

१. **वेदान्तपरिभाषा** : श्रीधर्मराजाध्वरीन्द्र द्वारा रचित वेदान्त-शास्त्र के इस मूर्द्धन्य ग्रन्थ का प्रकाशन श्रीरामकृष्णाध्वरि कृत **'शिखामणि'** व्याख्या तथा स्वामी श्री अमरदास द्वारा प्रणीत **'मणिप्रभा'** टीका के साथ किया गया है। विस्तृत भूमिका एवं टिप्पणी तथा अनुसन्धानात्मक परिशिष्टों के साथ इसका सम्पादन **प्रो. पारसनाथ द्विवेदी एवं डॉ. ददन उपाध्याय** ने किया है।
४००.००

२. **गाथासप्तशती (गाहासत्तसई)** : यह ग्रन्थ महाकवि हाल उपनामक श्री सातवाहन द्वारा सङ्कलित है। भट्ट श्री मथुरानाथ शर्मा कृत प्राकृतगाहासत्तसई का छायानुवाद संस्कृतगाथासप्तशती **व्यङ्ग्यसर्वङ्कषा** व्याख्या से विभूषित कर प्रकाशित किया गया है। इसके सम्पादन डॉ. उमापति उपाध्याय हैं।
४००.००

३. **कातन्त्रव्याकरणम्** : आचार्य शर्ववर्मा द्वारा प्रणीत व्याकरणशास्त्र के इस ग्रन्थ का प्रकाशन चार टीकाओं के साथ हुआ है। उत्कृष्ट भूमिका तथा अनुसन्धान्त्मक परिशिष्टों के साथ इस ग्रन्थ का सम्पादन डॉ. जनकी प्रसाद द्विवेदी ने किया।
भाग-१ ३५०.००
भाग-२ खण्ड-१ ५००.००
भाग-२ खण्ड-२ ६००.००

४. **सर्वानन्दकरणम्** : ज्योतिषशास्त्र के महनीय इस ग्रन्थ के प्रणेता पं. श्रीगोविन्द आप्टे जी हैं। स्वोपज्ञ व्याख्या के साथ इस ग्रन्थ का प्रकाशन किया गया है। १२०.००

५. **बृहदारण्यकवार्तिकसारः** : श्रीस्वामी विद्यारण्य द्वारा रचित वेदान्तशास्त्र के इस मूर्धन्य ग्रन्थ का प्रकाशन म०म० पं. श्रीहरिहर कृपालु द्विवेदी कृत **हिन्दीभाषानुवाद** के साथ किया गया है।
भाग-१ २५०.००, भाग-२ २५०.००
भाग-३ २४०.००, भाग-४ २७०.००

६. **रसगङ्गाधरः** : श्री नागेशभट्ट कृत **'गुरुमर्मप्रकाश'** व्याख्या के साथ पण्डितराज जगन्नाथ प्रणीत साहित्यशास्त्र के प्रौढ़तम इस ग्रन्थ का प्रकाशन किया गया है।
भाग-१ १८०.००
भाग-२ ४८०.००

७. **पाश्चात्त्य-भारतीयराजनीत्योः समालोचनम्** : पण्डितराज श्रीराजेश्वर शास्त्री द्रविड़ के व्याख्यानभूत इस ग्रन्थ में पाश्चात्य एवं भारतीय राजनीति का अनुसन्धानात्मक समालोचन उत्कृष्ट रीति से प्रस्तुत किया है।
भाग-१ ५००.००
भाग-२ ५५०.००

८. **मानवनीतिविवेचनम्** : प्रो.राधेश्यामधर द्विवेदी द्वारा प्रणीत इस ग्रन्थ में भारतीय सामाजनीति एवं मानवनीति का अनुसन्धानात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। २८०.००

९. **भास्करी (द्वितीय संस्करण)** : शैवदर्शन का महनीय यह ग्रन्थ श्री उत्पलाचार्य द्वारा प्रणीत **'ईश्वरप्रत्यभिज्ञाकारिका'** आचार्य श्री अभिनवगुप्त कृत **'विमर्शिनी'** टीका एवं इसकी टीकाभूत **'भास्करी'** व्याख्या से विभूषित कर प्रकाशित किया गया है।
भाग-१ १५०.००
भाग-२ १५०.००
भाग-३ १८०.००

१०. **वर्णाश्रम शिक्षा-व्यवस्था तथा आधुनिक युग में उसकी उपयोगिता** : डॉ.सुभाषचन्द्र तिवारी द्वारा रचित शिक्षाशास्त्र का अनुसन्धानात्मक एवं विश्लेषणात्मक यह ग्रन्थ सम्यक् रूप से सम्पादित कर प्रकाशित किया गया है। २००.००

११. **संस्कृतकथाकुञ्जः** : अभिनव कथा के निर्माण करने में दक्ष स्वनामधन्य अभिनव कथाकारों के इक्कीस कथाओं को सङ्कलित कर पण्डित श्री शिवजी उपाध्याय एवं डॉ. शिवदत्तशर्मा चतुर्वेदी द्वारा सम्पादित इस ग्रन्थ को प्रकाशित किया गया है। १३०.००

१२. **भवभूति की काव्यभाषा का शैली (रीति) वैज्ञानिक अध्ययन** : भाषावैज्ञानिक अनुसन्धान पूर्ण यह ग्रन्थ डॉ व्रजभूषण त्रिपाठी द्वारा रचित है। विद्वान् लेखक द्वारा सुसम्पादित इस ग्रन्थ को प्रकाश में लाया गया है। २६०.००

पत्रव्यवहारसङ्केत— **निदेशक, प्रकाशन संस्थान, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी-२२१००२**